राष्ट्रीय छात्रशक्ति

शिक्षा क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 25 अंक : 2

अप्रैल, 2002

अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद

भारत केन्द्रित शिक्षा पर राष्ट्रीय सम्मेलन के उद्घाटन के अवसर पर सम्बोधित करते हुए केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री डॉ. मुरली मनोहर जोशी, 6 मार्च, 2002

राष्ट्रीय

छात्रशक्ति

शिक्षा क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

•

संपादक

आशुतोष

•

अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद्

ज्ञान! शील!! एकता!!!

अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद्

भारत का अग्रमान्य छात्र संगठन जो विश्व की प्राचीनतम सभ्यता को वैश्विक समुदाय में गरिमापूर्ण स्थान प्राप्त कर एक शक्तिमान, समृद्धशाली एवम् स्वाभिमानी राष्ट्र के रुप में पुनर्निर्माण करने के भव्य लक्ष्य से प्रतिबद्ध है ।

छात्र शक्ति-राष्ट्र शक्ति

॥ वन्दे मातरम् ॥

राष्ट्रीय छात्रशक्ति
का प्रकाशन
अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद्
द्वारा
अभाविप कार्यालय
16/3676, रैगरपुरा, करोलबाग,
नई दिल्ली-110005
से किया गया।

संपादक
आशुतोष

मुद्रक
श्रीराम एण्टरप्राइज़ेज
एम-71, नवीन शाहदरा, दिल्ली-32

राष्ट्रीय छात्रशक्ति को और अधिक श्रेष्ठ एवं छात्रोपयोगी बनाने हेतु आपके सुझाव एवं सहयोग अपेक्षित हैं। आपके विचार 'संपादक के नाम पत्र' स्तंभ के अंतर्गत प्रकाशित किये जायेंगे।

भवदीय
संपादक

सम्पादकीय

कभी-कभी खामोशी भी हिंसा का आधार बनती है।

गोधरा में हुई बर्बर घटना, जिसमें 58 कारसेवक, जिनमें महिलायें व बच्चे भी थे, जिन्दा जला दिये गये, के बाद न तो देश के प्रमुख राजनेताओं, न तथाकथित सेकुलर राजनैतिक दलों और न ही मानवाधिकारवादियों के मुंह से निंदा और भर्त्सना के बोल फूटे। उनकी चुप्पी ने पीड़ित वर्ग में तीखी प्रतिक्रिया को जन्म दिया।

राम जन्मभूमि आंदोलन ने अनेक प्रश्न खड़े किये थे जिनके उत्तर की खोज मे समाज के सभी वर्गों में विमर्श आरंभ हुआ। इसका परिणाम था सामान्य तौर पर सभी वर्गों द्वारा इस सत्य का स्वीकार कि दिन-प्रतिदिन होने वाले सांप्रदायिक दंगे किसी के हित में नहीं हैं और इसके सूत्र सत्ता की राजनीति से जुड़े हुए हैं। इसका प्रत्यक्ष प्रकटीकरण था वोट बैंक की साम्प्रदायिक आधार पर ठेकेदारी कमजोर होना तथा परिणाम स्वरुप वोटों की उस गणित के आधार पर सरकार में चले आ रहे लोगों का सत्ता से वनवास।

उल्लेखनीय है कि यदि छिटपुट घटनाओं को छोड़ दें तो गत एक दशक में पूरे देश में सांप्रदायिक संघर्ष जैसी स्थितियां कहीं भी उत्पन्न नहीं हुईं। सांप्रदायिक दंगे जिन राजनैतिक दलों को सत्ता में बने रहने के लिये ठोस जमीन उपलब्ध कराते थे, एक दशक की शांति ने उन्हें तोड़कर रख दिया था। गोधरा की प्रतिक्रिया में उत्पन्न हिंसा ने जहां ऐसे तमाम मृतप्राय राजनैतिक दलों में प्राणवायु का संचार किया वहीं सेकुलर बुद्धिजीवियों और मानवाधिकारवादियों की आंखें चमक उठीं।

दस साल पीछे छूटा एजेण्डा पुनः एक बार हाथ लग जाने से वे सभी गद्गद् हैं। केन्द्र में सत्ता में वापसी के मंसूबे फिर से जाग उठे हैं। इसके लिये जरुरी है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ तथा भाजपा के विरुद्ध विष वमन के अभियान के जारी रखा जाये। विशिष्ट समुदायों में असुरक्षा का भाव कम न होने पाये। न सिर्फ देश में बल्कि सारी दुनियां में इन घटनाओं को बढ़ा-चढ़ा कर परोसा जाये। दुनियां के दादाओं से लेकर दुमछल्ले देशों तक में भारत सरकार के खिलाफ वातावरण पैदा किया जाये।

मीडिया ने अपनी तटस्थता त्यागकर सरकार के खिलाफ मोर्चा खोल दिया है। सूचना प्रदान करने की अपनी भूमिका से ऊपर उठकर वह घटनाओं एवं स्थितियों का विश्लेषण कर रही है साथ ही अदृश्य आधारों के अस्पष्ट आलोक में वह निर्णय भी सुना रही है। इन घटनाओं को इतने लम्बे समय तक चलाये रखने में निरसंदेह मीडिया की भूमिका से इनकार नहीं किया जा सकता जो निरंतर घटनाओं का इतना वीभत्स एवं नकारात्मक वर्णन कर रहा है और इस या उस समाज की प्रतिक्रिया का शांत होने का अवसर नहीं दे रहा है। मानवाधिकार आयोग का आचरण भी किसी राजनीतिक दल की तरह है। उसने गुजरात कांड पर जितनी तेज गति से रपट जारी की है वह वर्तमान व्यवस्था में आश्चर्यजनक ही है।

इस सब घटनाक्रम के चलते देश का वातावरण असहज हो गया है। ध्रुवीकरण की प्रक्रिया अब और तेज होना संभावित है। गुजरात तो कुछ समय में शांत हो ही जायेगा किंतु इस मुद्दे को लेकर विभिन्न व्यक्तियों, वर्गों तथा दलों की भूमिका के कारण उत्पन्न प्रश्नावली जब तक अनुत्तरित बनी रहेगी, स्थायी सद्भाव के प्रति आशंका बनी ही रहेगी।

भारत केन्द्रित शिक्षा पर राष्ट्रीय सम्मेलन

शिक्षा प्रणाली में आमूल चूल परिवर्तन आवश्यक

भारतीय आदर्शों एवं महत्वाकांक्षाओं को साकार करने के लिये देश में एक प्रभावी शिक्षा पद्धति को जन्म देना होगा जिसका केन्द्र बिन्दु भारतीय विचार और भारतीय संस्कार बनेगा। मैकाले और मार्क्स के सिद्धांतों को आधार बनाकर गढ़ी गई शिक्षा प्रणाली भारतीय संदर्भों में एक सीमा से अधिक उपयोगी नहीं हो सकती।

भारत की शिक्षा प्रणाली को राष्ट्रीय आवश्यकताओं से जोड़ने, भारतीय मेधा को विकसित करने तथा राष्ट्र पुनर्निर्माण के उदात्त लक्ष्य में उसका नियोजन करने का विचार तथा उसे साकार करने के प्रयत्नों के साथ शिक्षा क्षेत्र तथा समाज के विभिन्न घटकों को जोड़ने के लिये अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् तथा विद्यार्थी परिषद् के संयुक्त तत्वाधान में 'भारत केन्द्रित शिक्षा पर राष्ट्रीय सम्मेलन' का आयोजन गत 6 मार्च, 2002 को दिल्ली स्थित राष्ट्रीय संग्रहालय के सभागार में किया गया जिसका उद्घाटन केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री मुरली मनोहर जोशी ने किया।

श्री जोशी ने कहा कि हमारी शिक्षा पद्धति भारत केन्द्रित हो, पाश्चात्य आधारित नहीं। मनुष्य का शारीरिक मानसिक, बौद्धिक और आत्मिक विकास, यही भारतीय शिक्षा का दर्शन है।

समाज में शिक्षा की भूमिका का उल्लेख करते हुए श्री जोशी ने कहा कि शिक्षा पद्धति में बुनियादी परिवर्तन की जरूरत है। आर्यों के आक्रमण के सिद्धात को सिद्ध करने वाले पुरातात्विक साक्ष्य आज तक उपलब्ध नहीं है किन्तु वे पाठ्यपुस्तकों का हिस्सा बने हैं। आज भी भारतीय समाज का मानव अधूरा है। अधिकांश इतिहासकारों ने गहन तथ्यान्वेषण करने के स्थान पर पांडुलिपियों से छेड़छाड़ की तथा विकृत तथ्य प्रस्तुत किये।

उन्होंने कहा कि भारत में शिक्षा का भारतीयकरण अभी तक नहीं हो सका है। मैकाले की नीतियां आज भी हमारी शिक्षा पद्धति एवं पाठ्यक्रम पर हावी हैं तथा पीढ़ी दर पीढ़ी युवाओं को अनुपयुक्त शिक्षा पाने के लिये बाध्य कर रही हैं। विविध क्षेत्रों में भारतीयों की उपलब्धियों को विद्यार्थियों को बताया जाना चाहिये परंतु दुर्भाग्यवश ऐसा नहीं है। हमारी पुस्तकों में अरस्तु, सुकरात और प्लूटो तो हैं परन्तु आर्य भट्ट और वाराह मिहिर का उल्लेख न के बराबर है।

भारतीय शिक्षा पद्धति से श्रेष्ठ एवं बुद्धिमान मनुष्यों का निर्माण हो तथा विज्ञान, अर्थशास्त्र, समाज शास्त्र तथा राजनीति विज्ञान की पाठ्यचर्या भारतीय समाज की आवश्यकता को पूरा करें। भारतीय शिक्षा अपने वृहत्तर अर्थों में परिपूर्ण हैं। किन्तु उसका यह अर्थ नहीं है कि हम पश्चिमी ज्ञान को नकार देना चाहते हैं। वहां भी जो उपयोगी है उसे रखा जाये किन्तु जो प्रदूषित है उसे छोड़ देना ही श्रेयस्कर है।

हम चाहते हैं कि हमारी शिक्षा में भारतीय ज्ञान-विज्ञान का भी प्रवेश हो, भारतीय परिप्रेक्ष्य में शिक्षा के महत्व को स्थापित किया जाए।

डॉ. जोशी ने संस्कृत भाषा के महत्व को समझाते हुए कहा कि हमें संस्कृत भाषा का अध्ययन अवश्य करना चाहिए। हमारा सम्पूर्ण ज्ञान-विज्ञान संस्कृत भाषा में है, वेद-उपनिषद्-संस्कृत भाषा में है। यदि हम संस्कृत भाषा का अध्ययन नहीं करेंगे तो हम अपने अतीत को भी पूर्णतया नहीं समझ सकेंगे। ऐसी शिक्षा ही एक सच्चे भारतीय को जन्म देगी। दिन भर चले इस सम्मेलन में तीन सत्रों में अलग-अलग विषयों पर चर्चा हुई। इन सत्रों में शिक्षा क्षेत्र से जुड़े जिन प्रमुख विद्वानों ने विचार रखे, उनमें थे-भारतीय दार्शनिक अनुसंधान परिषद् के निदेशक डॉ. किरीट जोशी, जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय के व्याख्याता डॉ. मकरन्द परांजपे, राष्ट्रीय शैक्षणिक योजना एवं प्रशासनिक संस्थान के अध्यक्ष डॉ. बी.पी. खण्डेलवाल, मविपाल अकादमी के कुलपति डॉ. बी.एम. हेगड़े, समाज विज्ञान अनुसंधान परिषद् के अध्यक्ष डॉ. वी. आर. पंचमुखी, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् के निदेशक डॉ. जे.एस. राजपूत, राज्यसभा सदस्य श्री बाल आपटे तथा भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद् के अध्यक्ष श्री एम.जी. एस. नारायणन।

सम्मेलन में अ.भा. विद्यार्थी परिषद् के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. कैलाश शर्मा, मंत्री श्री अतुल कोठारी, राष्ट्रीय महामंत्री श्री रमेश पप्पा, परिषद् के पूर्व अध्यक्ष श्री पी.वी. कृष्णभट्ट सहित देश के 16 प्रान्तो तथा नेपाल से आये प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

कुल 25 विश्वविद्यालयों, 14 सामाजिक संगठनों, 7 राष्ट्रीय स्तर के शिक्षा संस्थानों से 155 लोग सहभागी हुए जिनमें 2 राज्य सभा सदस्य, 2 योजना आयोग के पूर्व सदस्य, NSIT के पूर्व चेयर मैन, नेहरु युवा केन्द्र संगठन के वाइस चेयरमैन, NIEPA के चेयर मैन, उत्तरांचल के पूर्व शिक्षा राज्य मंत्री, 7 वर्तमान व पूर्व कुलपति, 54 प्राध्यापक, 14 शिक्षा विद, 20 सामाजिक कार्यकर्त्ता तथा शेष छात्रों ने भाग लिया।

NATIONAL CONVENTION ON INDO CENTRIC EDUCATION IN KOLKATA

A national convention on Indo-Centric Educaiton was organised by Active society for love and peace, Shyampukur at the Indian Institute of chemical Biology, Kolkota on 10th March, 2002. The covention was inauguration by Shri K.R. Mlkani, emient Journalist and ex M.P. The emphasized the need for Incorporation of nationalistic view point in the education system. Shri Atul Kothari, national Secretary ABVP introduced the subject Indo-Centric Education.

The first session was "online of Notion Educaiton Broad Perspeative" The keynote speach was delivered by Dr. Kapil Kapoor of J.N.U. He emphasized that we should liberate ourselves from the mental slavery of the colonial era shadow which is still hovering over our heads. He added that this mental slavery, which has become a severe hindrance in our progress, is the result of denationalisation of our system of education by the British to suit their own interest. Dr. Shib Ranjan chatterjee, Prof. political science Moulana Ajad College kolkata emphasized that it needs to culture national feeling among students as Indo-centric educaiton. The session was presided over by Dr. Pranab chatterjee, Director, West Bengal state Archieves.

The second session dealt with "Education & National Heritage" and keynote speech was made by shri Krishna Bhatt (formar National president of ABVP). He mentioned that a nation's cultural heritage is the sum of its past scientific intellectual, philosophical, artistic & spiritual contribution and achievements. He said that and education system without cultural heritage is like a tree without roots. Dr. Sati chatterjee ex Head, English, J.U. kolkata while speaking in the session talked about the spineless system or rootlessness in the society. The session was presided over by Dr. kalyanbrata Bhattacharya prof. Zeanmies, Bardhaman university.

The third session was on " Devloing school curriculaum. The keynotes speech was made by Dr. Mahesh sharma, M.P. Rajyasabha. He said that the existing gap between the formal system of educaiton and the country's rich and varied cultural traditions need to be bridged. Swami Sampwinanand ji, Principal, Pamkrishna Mission residential college, Narendrapur discussed about the urgent necessity for development of school curriculum Prof. Dineshanand Goswami ex National president ABVP, presided over the session.

The concluding session was addressed by shri Ramesh Pappa, National general Seceretary, ABVP. Swami Atmapriyananjasji, Principal, Ramkrishna Vidya Mandir, Belur, also spoke in the session.

The convention, which saw aroud 200 delegates from various states, ended on a positive note.

THE EXPLORER OF HIMALAYA

The exploration work in the Himalayas and Tibet by Swami Pranavananda, a Telugu Sanyasi, explorer of Holy Kailas and Manasarovar was a great task in unfolding the mystery and beauty of the Himalayas. He discovered the true sources of four great Himalayan rivers, the Indus, the sutlej, the Brahmaputra and the Karnali. The Royal Geographical Society of London and the Survey of India accepted his findings; the SOI has incorporated them in the maps published since 1941. His thrilling book on 'Exploration in Tibet' was published by the University of Calcutta in 1950.

INDO-CENTRIC EDUCATION

Education is one of the most important dominion of our national life. Education holds the key to development and progress in every sphere of our existence. From an integrated and synergic view point, educational system constitutes the foundation of the legal, administrative, civic and developmental domains of unfolding India of tomorrow.

We inherit a philosophy of education which has come to us from the days of upnishads and the essence of which is the quest for highest knowledge or the knowledge of the self.

The ability to comprehend the basic unity underlying the apparent diversity of the universe and to group the indivisible in the divisible forms of existence is described as the highest from of knowledge (Bhagwad gita : 1819). It is this knowledge that enables the individual to rise to a higher spiritual and moral plane. In the present system of education, we find that information has come to be quoted with knowledge Information which serves as a means for immediate material benefits. Devouring the pursuit of knowledge from higher spiritual and moral values is a ban on the present system.

The great thinker and philosophers of our country like swami Dayanand, Swami Vivekanand, Sri Aurobindo and Mahatma Gandhi have described education as a man-making process. Bringing out the latent sublime qualities within the individual and providing for the all round development of the personality including the physical, mental intellectual and spriritual aspects should form the goal of education. How to achieve this goal and what inputs are necessary towards this and are subjects of a careful and intense study.

Educational reforms is a much debated subject in recent years. But discussion on this theme has been in motion since the pre independence days. Aware of the fact that the system of education devised by the erstwhile alien rulers was not in consonance with our national goals and aspirations and realising the delirious effect it had on our young minds, several leaders of the freedom movement initiated efforts to establish nationalist educational institutions. The service of these institutions in infusing a spirit of patriotism and national outlook can't be forgotten.

In post independence India, several committees and commissions were setup to propose recommendations for change in the educational system. The Radhakrishnan Commission (1948-49) on University Education, the Laxmanswamy Mudaliyar Committee (1952-53) on secondary Education and the Kothari Commission (1964-66) on education can be mentioned as the prominent ones in this connection. Rammurthy Commission report (1990) strongly emphasised that linking the Indian educational system to its indigenous roots and developing curriculum around the environment of the recipient child is and important componant of a comprehensive educational programme. We also need to realise the fact that the present education system is entangled in too much of bureaucratic confusion.

During the last fifty years of independence there were no serious efforts to build a national system of education. The task of rebuilding education lost its way in the wire of ideological confusion. With the peculiar interpretation given to secularism, which became the ruling ideology of the nation, nationalism was at a discount. Everything that installed a sense of national pride and referred to the glorious achievements of the past was considered repugnant to the concept of secularism. The end result was a rootless

education system which failed to reflect the national ethos.

Inculcating the national seeing and enabling the student to develop a national vision is an important aspect of education. The knowledge of the history, tradition, values and the world view together shape the national vision of the individual. The pupil must be made to understand the bases of our national unity and uniqueness of our culture. Inputs necessary for the learner to imbibe a sense of national pride must be included in the curriculum. If the objective of what is known as the Macaulary system of education was to inject an injeriority complex in the minds of students and create a class of people "Indian in colour but European in culture", the objective of national eduction should be to develop an army of proud and independent Indian's striving to achieve creativity and excellence in all walks of life and making the youth of the country emerges from the portable of the colleges and universities with a spirit of supreme confidence in himself and in his nation with an awareness that he has something to offer to the world must become the goal of our education.

It goes without saying that education is to be linked with socio-ecfonomic needs of the society. The purpose of education is not to create human robot or to supply skilled manpower to the global market. Instead, education must become an effective instrument of economic development and social change. We are a country with the unique distinction of having enormous resources juxtaposed with abject poverty We have not been able to harness our resources to raise the living conditions of the common masses because of our inability to attune our educational system towards this end. Right kind of education. Tuned to the economic and social needs of the society, is the only answer to our social-economic problems. Education must be able to produce an army of skilled personnel. with social sensitivity that will address itself to the problems of the society with a sense of commitment.

Teaching of history is an important componant in the scheme of education. History is not just a body of information, relating to the past but is something which builds an emotional bridge with the past. Knowledge of history should enable a student to feel proud about the past achievements of his predecessor and at the same time to learn from the past mistakes. Drawing inspiration from the past achievements the students should be able to think in terms of building a better and brighter future.

During the British regime the teaching of history was manipulated with a clear design to create an inferiority feeling among the subjects. The Students were taught that they belonged to a defeated race which was incapable of producing anything worth while and whatever precious was found in this country was borrowed from outside. They were told that British rule was a great boon and God gift because of which they could become civilized. If the intention of the alien rulers was to etch an inferiority complex among the subjects, the macaulayist-marxist combine which dominated the education system during the post independence period picked up the thread from where the British left. The Marxist historians strained every nerve to present the history of the country as nothing but a story of inequality, injustice, exploitation and repression by the upper classes. History was taught to make the students feel ashamed of their own past and denounce their own ancestors. History was used as a tool to inject Marxist ideology and prepare the ground for class struggle. The Marxist interpretation of history reveals an unbiased intention to strike at the roots of nationalism.

Education must fulfil the objectives like development of the personality of the individual, fulfilment of the social, economic, technological and political needs of the society and preservation, enrichment and transmission of the cultural heritage. All the three have to be considered from a distinct Indian or nationalist point of view.

उदयोन्मुख तंत्रज्ञों का प्रतिभाविष्कार - डिपेक्स-2002

नागपुर में हुआ गुणवत्ता के उत्सव का सफल आयोजन

अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद्, विदर्भ प्रदेश द्वारा अभियांत्रिकी चलप्रतिकृतियों की महाराष्ट्र राज्य स्तरीय स्पर्धा एवं प्रदर्शनी 'डिपेक्स-2002' का आयोजन नागपूर में सफलता से सम्पन्न हुआ।

रा.स्व. संघ के संस्थापक डॉ. हेडगेवार की समाधिस्थल स्मृति मंदिर परिसर में स्व. देवांग मेहता नगर में 1 से 5 फरवरी को सम्पन्न हुआ यह 'गुणवत्ता का उत्सव' (द फेस्टीवल ऑफ टेलेंट्स!) विदर्भ के औद्योगिक जगत एवं अभियांत्रिकी छात्रों के लिये एक सुनहरा अवसर रहा।

महाराष्ट्र राज्य में चलने वाला 'डिपेक्स' तकनीकी छात्रों हेतु महत्वपूर्ण एवं दिशादर्शक, उपयुक्त उपक्रम सिद्ध हुआ है।

अभियांत्रिकी तथा तंत्रनिकेतन (पॉलीटेक्नीक) के अंतिम वर्ष के छात्रों द्वारा निर्मित चलप्रतिकृतियों का राज्यस्तरीय प्रदर्शन एवं स्पर्धा 'डिपेक्स' का आयोजन 1986 से प्रारंभ हुआ। सांगली में 1986 में प्रारम्भिक रूप से शुरू हुए डिपेक्स में 16 चलप्रति कृतियों के साथ 50 छात्रों ने सहभाग किया। डिपेक्स के आयोजन की कल्पकता एवं उपयोगिता अभियांत्रिकी जगत को ध्यान में आने के बाद अब 'डिपेक्स' एक महत्वपूर्ण एवं प्रतिष्ठित प्रतियोगिता बन गई है।

डिपेक्स-2002 में महाराष्ट्र राज्य के 24 जिलों से, 70 महाविद्यालयों से, 173 वर्किंग मॉडल्स के साथ 739 छात्र सहभागी हुए। जिसमें 17 छात्राओं ने भी सहभाग किया।

1 फरवरी को डिपेक्स-2002 के उद्घाटन समारोह में केन्द्रीय ग्रामीण विकास राज्यमंत्री डॉ. एम.के. अण्णा पाटील ने कहा कि, ग्रामीण विकास भारतीय विकास का अत्यंत महत्व का अंग है। ग्रामीण क्षेत्र के सर्वांगीण विकास को प्राथमिकता देते हुए ग्रामीण विकास के लिये उपयुक्त प्रौद्योगिकी पर अधिक संशोधन की आवश्यकता प्रतिपादित की। एशिया के एकमात्र अल्युमिनियम अनुसंधान केंद्र के निदेशक डॉ. बी.बी. कुटूंबराव ने इन तकनीकी छात्रों को संबोधित करते हुए कहा कि, अपना देश खनिज संपदा और युवा शक्ति का भंडार है। जिसके आधार पर हम विश्व में वरीयता प्राप्त कर सकते है। अपनी इस संपदा का हमें परिचय हो और उसका सही उपयोग होने के लिये 'डिपेक्स' जैसे उपक्रम की आवश्यकता है।

डिपेक्स

'डिपेक्स' में 3 स्तर की प्रतियोगिता होती है।

डिपेक्स : तंत्रनिकेतन के छात्रों द्वारा निर्मित चलप्रतिकृतियों की स्पर्धा

सृजन : अभियांत्रिकी के छात्रों द्वारा निर्मित चलप्रतिकृतियों की स्पर्धा

शोध : तंत्र निकेतन, अभियांत्रिकी तथा स्नातकोत्तर विज्ञान के छात्रों द्वारा निर्मित नवीनतम तकनीकी की चलप्रतिकृतियों की स्पर्धा

डिपेक्स में यंत्र अभियांत्रिकी के 3 सैक्शन, परमाणु एवं संगणक शास्त्र के 3 सैक्शन, विद्युत अभियांत्रिकी का 1 सैक्शन, स्थापत्य अभियांत्रिकी-1, रसायन अभियांत्रिकी-1, अपारंपरिक ऊर्जा स्रोत के लिए 1 सैक्शन, ऐसे कुल 10 सैक्शन होते है।

कृषि, कृषि अभियांत्रिकी के छात्रों के लिये विशेष कृषि सैक्शन होता है।

सृजन के लिये 2 सैक्शन और शोध के लिये 1 ऐसे कुल 14 सैक्शन में यह स्पर्धा होती है।

उद्देश्य :

—अपने देश में आने वाली समस्याएँ पहचानकर तकनीकी का उपयोग करके उनको सुलझाना।

—समस्याओं का समाधान करने वाली क्षमता छात्रों में बढ़े।

—छात्रों में कल्पकता, सृजनशीलता बढ़े।

—कारीगरिक कौशल्य बढ़े।

—वर्किंग मॉडल की व्यावसायिकता तथा उपयुक्तता के प्रति जागरूकता।

—उभरते तंत्रज्ञों में कार्यसंस्कृति, स्वदेशी तकनीकी तथा उद्योजकता का भाव बढ़े।

सृजन ट्रस्ट :

युवकों में उद्योजकता का विकास हो, उद्योग शुरू करने के लिये सकारात्मक मार्गदर्शन तथा स्रोतों की जानकारी देने हेतु उद्योजकता विकास केन्द्र 'सृजन' ट्रस्ट की स्थापना की गयी। इस ट्रस्ट के संयुक्त तत्वावधान में 'डिपेक्स' का आयोजन होता है।

इस अवसर पर अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. कैलाश शर्मा ने विद्यार्थी परिषद् द्वारा चलाये जा रहे विभिन्न उपक्रमों के उद्देश्य एवं उपयोगिता से अवगत कराया। अपने प्रतिभाओं का उपयोग देश के विकास के लिये करने का आह्वान उन्होंने उपस्थित छात्र इकाई को किया।

भारतीय तंत्रज्ञान की यशोगाथा :

भारतीय तंत्रज्ञों की कामगिरी और उपलब्धियाँ जनता के सामने आएँ, भारतीय क्षमताओं को हम पहचान सकें, विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हम भी अग्रसर हैं यह भाव बढ़े, उभरते अभियंताओं में आत्मविश्वास बढ़े इस उद्देश्य से 'भारतीय तंत्रज्ञान की यशोगाथा' नामक दालन प्रस्तुत किया था।

भारत सरकार के जैव तंत्रज्ञान विभाग, वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिषद्, खादी और ग्रामोद्योग आयोग, हुडको, जवाहरलाल नेहरू अल्युमिनियम अनुसंधान केन्द्र आदि उपक्रमों ने अपनी उपलब्धियां प्रदर्शित की।

इस दालान का उद्घाटन महाराष्ट्र विधान परिषद् के विपक्ष के नेता श्री नितीन गडकरी के हाथों संपन्न हुआ। अपनी कारीगरता और कुशलता का अप्रतिम उपयोग करते हुए विश्व का सबसे छोटा चलनेवाला बाष्प इंजन तैयार करने वाले श्री इकबाल अहमद को इस अवसर पर शाल और श्रीफल, स्मृति चिह्न देकर सम्मानित किया गया। सभी दर्शक श्री इकबाल की कुशलताओं को देखकर अचंभित रह गये।

युवा उद्योजकों के साथ संवाद :

अंतिम वर्ष के तकनीकी छात्र आगे जाकर उद्योग प्रारम्भ करें, उनमें उद्योजकता का भाव बढ़े, उद्योग संबंधी भ्रम दूर हों, आत्मविश्वास बढ़े इन उद्देश्यों को लेकर इन छात्रों का यशस्वी युवा उद्योजकों साथ संवाद रखा गया था। जिन युवा उद्योजकों ने खुद की हिम्मत पर उद्योग प्रारम्भ करके आज एक प्रतिष्ठित उद्योग स्थापित किया है – ऐसे उद्योजकों ने अपने अनुभवों से छात्रों को अवगत कराया। उद्योग प्रारंभ करने की मानसिकता, मनस्थिति, उद्योग चलाने के तत्व, नैतिकता, गुणवत्ता का सही ध्यान आदि विषयों पर छात्रों को सकारात्मक मार्गदर्शन मिला।

परीक्षण :

छात्रों द्वारा बनाए गये वर्किंग मॉडल्स का तकनीकी सिद्धांतों के आधार पर तथा प्रायोगिक तत्वों को ध्यान में रखकर परीक्षण प्राध्यापक तथा उद्योजकों के गुट द्वारा होता है। स्पर्धक छात्रों का तकनीकी ज्ञान, नवीनता, चलप्रतिकृति की गुणवत्ता तथा कारीगरता, कुशलता, उद्योगजगत एवं समाज को उसकी उपयुक्तता, पर्यावरण के लिये अनुकूलता इन मुद्दों पर 4 फरवरी को परीक्षण का कार्य हुआ।

प्रदर्शनी :

'प्राईड ऑफ इंडिया' के नाम से भारतीय प्राचीन तंत्रज्ञान, वास्तुशास्त्र, नौकायन शास्त्र, आयुर्विज्ञान, खगोल विज्ञान, रसायन शास्त्र आदि में भारत के योगदान को विभिन्न फलकों द्वारा दर्शाया गया था। विविध भाषाओं में अनेकविध श्लोकों का संग्रह 'श्री भुवलय' इस प्रदर्शनी का मुख्य आकर्षण रहा। इसके साथ विद्यार्थी परिषद् की देश में चलने वाली तथा विशेष गतिविधियों को भी दर्शाया गया था।

समारोप तथा पारितोषिक वितरण समारंभ :

डिपेक्स के कुल 14 सैक्शनों से हर सैक्शन के लिये प्रथम तथा द्वितीय पारितोषिक दिया गया। नागपुर क्षेत्र में यशस्वी उपक्रम-मैगनिज ओर इंडिया लिमिटेड (माईल) के अध्यक्ष डॉ. दर्शनकुमार साहनी के हाथों पुरस्कार वितरण संपन्न हुआ। अभियांत्रिकी अनुसंधानों को नई दिशा देने वाले 'डिपेक्स' की सराहना करते हुए इस स्पर्धा के युग में सभी भारतीयों को चुनौतियों का सामना करने के लिये समर्थ बनने की आवश्यकता को प्रतिपादित किया।

अ.भा.वि.प. के राष्ट्रीय सहसंघटनमंत्री श्री सुनिल आंबेकर ने बताया कि, भारतीय तंत्रज्ञान की श्रेष्ठता दुनिया में प्राचीन काल से सिद्ध हुई है। स्वदेशी तंत्रज्ञान से ही भारत का अपेक्षित विकास हो सकता है। ग्लोबलाइजेशन के दौर में आने वाली चुनौतियों का सामना करने के लिये समर्थ बनने का छात्र शक्ति को आह्वान किया।

इस अवसर पर डिपेक्स-2002 में सहभागी सभी वर्किंग मॉडल्स की जानकारी देने वाली 'प्रोजेक्ट डिरेक्टरी' तथा विद्यार्थी परिषद् विदर्भ प्रदेश का मुख पत्र 'विदर्भ छात्र चेतना विशेषांक का विमोचन किया गया।

पीने के पानी से फ्लोराइड को निकालने के लिये बनाया गया 'बायो अॅडसॉर्बेंट कॉलम', हाऊसहोल्ड कॉम्पॅक्ट जीम' आटा बनाने की मशीन, न्यूमॅटीक बैलन्स, डिजीमीटर, आदि वर्किंग मॉडल्स आकर्षण का केन्द्र रहे।

नागपुर के रेशीमबाग परिसर में सम्पन्न हुए इस पांच दिवसीय गुणवत्ता के उत्सव में रेशीम बाग को 'तंत्रबाग' की एक नई संज्ञा प्रदान की गयी। भारत को सर्वोत्तम सिद्ध करने की हम सभी की अभिलाषा हमारे प्रतिभावान तंत्रज्ञ अवश्य पूरी करेंगे ऐसा आत्मविश्वास इस स्व. देवांग मेहता परिसर में आने वाले हर किसी के चेहरे पर प्रतिबिंबित होता हुआ दिखाई दे रहा था। पारितोषिक प्राप्त होने के बाद स्पर्धकों में उत्साह, आवेश था, उसमें राष्ट्रभक्ति की झलक निःसंशय थी। हर एक की आंखों में सपना था भारत को सर्वश्रेष्ठ बनाने का और 'Carrer for the Nation' का संकल्प भी उन्हीं आंखों से झलक रहा था।

प्रदर्शनकारी छात्रों पर पुलिस का बल प्रयोग

खबर का आधार ?

अजमेर, 23 जनवरी। राज्य में शैक्षणिक अराजकता से ग्रस्त होकर अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद के बैनर तले बुधवार को अजमेर में माध्यमिक शिक्षा बोर्ड भवन के बाहर प्रदर्शन कर रहे हजारों छात्रों पर पुलिस ने बल प्रयोग किया। जवाब में विद्यार्थियों ने जमकर पत्थर बरसाये। बल प्रयोग से परिषद् के अजमेर व भीलवाड़ा जिले के छह पदाधिकारी चोटिल हो गये, जबकि पथराव से नौ पुलिसकर्मियों के चोटें लगीं। घायल छात्रों में से दो के सिर फटने व एक छात्र के कंधे की हड्डी टूटने की शिकायत पर उन्हें नेहरू चिकित्सालय में भर्ती कराया गया। जिला प्रशासन ने घटना की न्यायिक जांच कराने तथा दोषी पुलिस अधिकारियों के विरुद्ध प्राथमिक रिपोर्ट दर्ज करने का आश्वासन दिया है।

जानकारी के अनुसार प्रदर्शनकारी छात्रों व पुलिस के बीच लाठी-भाटा जंग तब शुरू हुई जब बोर्ड भवन के द्वार पर विद्यार्थियों के बढ़ते दबाव को कम करने के इरादे से अधिकारी के निर्देश पर पुलिस कर्मियों ने लाठियां चलाना शुरू कर दिया। इस दौरान कुछ विद्यार्थियों के चोटें लग जाने से भगदड़ मच गई, जिसमें कई छात्र कुचल गये।

विद्यार्थियों ने बल प्रयोग के विरोध में बोर्ड भवन पर पत्थर फेंके, जिससे बोर्ड भवन के अंदर खड़े पुलिसकर्मी उत्तेजित हो गये। उन्होंने द्वार पर जमा विद्यार्थियों के पीछे से ही सिर पर लाठी बरसाना शुरू कर दिया।

इस घटना में राजकीय महाविद्यालय के पूर्व छात्रसंघ अध्यक्ष एवं परिषद् के आंदोलन प्रमुख प्रशान्त यादव, भीलवाड़ा, के परिषद् जिला संयोजक कृष्ण मुरारी तथा परिषद् के आंदोलन संयोजक विनीत बंसल के गंभीर चोटें आईं। सिर फटने से लहूलुहान हुए यादव व कृष्ण मुरारी को पुलिस ने तत्काल नेहरू चिकित्सालय पहुंचा दिया, जबकि कंधे पर लाठी लगने से चोटिल हुए विनीत बंसल मौके पर ही गिर गये और भगदड़ में अपने ही साथियों के पैरों तले कुचल गये। इस जंग में भीलवाड़ा विद्यार्थी परिषद् के नगर उपाध्यक्ष प्रतीक शर्मा तथा जिला कार्यालय प्रमुख अमित सारस्वत व अजमेर के राजीव शर्मा के भी चोटें आईं।

जानकारी के अनुसार मौके से तितर-बितर हुए छात्रों ने शहर के अनेक बाजार बन्द करा दिये। वहीं सूचना केन्द्र मार्ग पर खड़ी दो कारों के शीशे तोड़ दिये। आंदोलन के उग्र हो जाने से अतिरिक्त जिला कलक्टर प्रशासन अशफाक हुसैन, अतिरिक्त जिला कलक्टर (शहर) के.के. शर्मा तथा अन्य पुलिस व प्रशासनिक अधिकारियों को बोर्ड भवन पहुंचना पड़ा। इससे पूर्व लगभग दो घंटे तक बोर्ड भवन के बाहर छात्र अनुशासित रूप से प्रदर्शन करते रहे। छात्रों के आंदोलन के लिये पहले से ही बोर्ड भवन के बाहर मुख्य मार्ग छोड़कर मंच बना रखा था, जहां से परिषद् के अनेक वक्ताओं विभाग संयोजक मनोज माथुर, प्रदेश मंत्री नीरज जैन, राष्ट्रीय मंत्री सुनील बंसल आदि ने छात्रों को एक घंटे तक सम्बोधित किया।

इससे पूर्व लगभग पांच हजार विद्यार्थी अजमेर की विभिन्न सड़कों से रैली के रूप में गुजरते हुए बोर्ड भवन पहुंचे थे। विद्यार्थियों का पूरे मार्ग में प्रदर्शन अनुशासित ही रहा। बोर्ड भवन के द्वार पर मुख्यमंत्री अशोक गहलोत का पुतला जलाये जाने के बाद विद्यार्थी परिषद् के आंदोलन संयोजक एवं अन्य पदाधिकारियों ने बोर्ड अध्यक्ष डॉ. पी.सी. व्यास की अनुपस्थिति में बोर्ड सचिव इन्द्र सिंह राव को अपना ज्ञापन देने की पुलिस प्रशासन से पेशकश की। बोर्ड के द्वार पर दीवार बनकर डटे पुलिसकर्मियों ने उन्हें भीतर जाने से रोका। द्वार पर खड़े छात्रों ने इस दौरान सरकार की शिक्षा नीति, माध्यमिक शिक्षा बोर्ड में व्याप्त अनियमितताओं को लेकर नारेबाजी शुरू कर दी। इसी दौरान किसी पुलिसकर्मी की लाठी से छात्र के घायल होने से विद्यार्थी उग्र हो गये और अनुशासित प्रदर्शन का रूख बदल गया।

काफी जद्दोजहद के बाद अतिरिक्त पुलिस अधीक्षक सत्यवीर सिंह प्रदर्शनकारी छात्रों को समझाने में सफल हो सके। उन्होंने मौके से ही अतिरिक्त जिला कलक्टर अशफाक हुसैन व के.के. शर्मा को फोन पर स्थिति से अवगत कराते हुए उन्हें प्रदर्शनकारियों की मांग पर बोर्ड

...शेष पृष्ठ 19 पर

"भारतीय विचार विश्व संस्कृति का कायाकल्प कर देगा"

कहां से ?

(डॉ. सुभाष काक बैटन रोज के लुईसियाना स्टेट युनिवर्सिटी में इलेक्ट्रिकल एवं कम्प्यूटर इंजीनियरिंग के प्रोफेसर है। वे प्राचीन भारतीय विज्ञान एवं तकनीकी के भी एक सुप्रसिद्ध विद्वान है। डॉ. काक मूल रूप से कश्मीर के निवासी है। वे आई.आई.टी. दिल्ली, इम्पीरियल कॉलेज, बेल लेबोरेटरीज़ एवं टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ फण्डामेण्टल रिसर्च में काम कर चुके है। उन्होंने दस पुस्तकें लिखी है, एवं स्नायुतंत्र (Neural Networks), मात्रा भौतिकी (Quantum Physics), कृत्रिम मेधा (Artificial Intelligence), एवं विज्ञान का दर्शन तथा इतिहास (Philosophy and history of Science) जैसे विविध विषयों पर तीन सौ से भी अधिक लेख लिखे है।

प्रस्तुत है राजीव श्री निवासन की डॉ. काक के साथ वार्तालाप के कुछ अंश :

राजीव श्रीनिवासन – आप एक कार्यरत इलेक्ट्रिकल इंजीनियर हैं। आपके स्नायुतंत्र (Neural Networks), जैसे विषयों पर किये गये दिशा दर्शक कामों का पेटेण्ट हो चुका है। साथ ही आप एक जाने माने कवि हैं, लेखक हैं, संस्कृत के विद्वान हैं तथा प्राचीन भारतीय विज्ञान के विशेषज्ञ हैं। यह सब एक साथ कैसे संभव हो सका?

काक – प्राथमिक शिक्षा-काल में मेरी रुचि लेखन एवं विज्ञान दोनों में थी, परन्तु स्कूल की पढ़ाई पूरी करने के बाद मेरा झुकाव लेखक बनने के प्रति होने लगा। मेरी मां ने मुझे चेतावनी दी कि जीविकोपार्जन हेतु यह कोई अच्छा साधन न था, और उन्होंने मुझे इंजीनियरिंग कॉलेज में भेज दिया। मैं खुश हूं, क्योंकि मैंने काफी पहले ही समझ लिया था कि साहित्यिक एवं वैज्ञानिक कल्पना शक्तियों में कोई विशेष अन्तर नहीं। निःसन्देह विज्ञान में बहुत कुछ कठिन एवं यांत्रिकी है, परन्तु यही बात साहित्य में भी है। जब मैंने पाणिनि की 2500 वर्ष पुरानी व्याकरण, जो कि अत्यन्त आश्चर्यजनक रूप से गूढ़ है, के समय की परिस्थितियों से संबंधित प्रश्नों के उत्तर खोजने की कोशिश की तो मेरे प्राचीन विज्ञान के कार्य को गति मिल गई। ज्यों-ज्यों मैं उच्च स्तरीय ग्रंथों का अवलोकन करने लगा, मुझे यह बात स्पष्ट होती गई कि विज्ञान के भारतीय इतिहास तथा सामान्य प्राचीन भारतीय इतिहास को जांचने-परखने के लिये जिन प्रतिमानों को आधार बनाया गया था वे गलत हैं।

वास्तव में पश्चिमी जगत में अनेक लोग ऐसे हैं जो सी.पी. स्नो की भांति, विज्ञान एवं साहित्य, इतिहास, दर्शन जैसे कला विषयों में भी दक्ष हैं। उनमें से अनेक तो ऐसे हैं जो भारतीय कुल परम्पराओं का इतना अधिक ज्ञान रखते हैं जितना अधिकांश भारतीय भी नहीं रखते। केवल गत लगभग पचास वर्षों से भारत ने अपनी ही कुल-परम्परा एवं विरासत की ओर पीठ मोड़ ली है और हमारे वैज्ञानिक अपने प्रज्ञा संबंधी इतिहास की जानकारी वस्तुतः शून्य के समान रखते हैं। जो भी जानकारी वे रखते हैं वह अंग्रेज इतिहासकारों और उनके भारतीय अनुयायियों के द्वारा लिखे गये तोड़े-मरोड़े एवं इधर-उधर से सुने-सुनाये वर्णनों पर आधारित होती है।

रा.–आपने भारतीय विज्ञान के इतिहास में पर्याप्त शोध किया है। आज का भारतीय विज्ञान, ज्यादा से ज्यादा यह कहा जा सकता है कि, प्राचीन विज्ञान से ही निकला है, यह भी कहा जा सकता है कि वह समय से बहुत पीछे रह गया है। आपका क्या कहना है?

सु.– अनेक कारण हैं। पहला है जिज्ञासा:। हमें अपने इतिहास के तथ्यों को जानना चाहिए। दूसरा, यह एक उलझन का विषय है कि हमारे पूर्वजों ने कुछ क्षेत्रों में आश्चर्यकारी प्रगति की थी, जैसे व्याकरण या चेतना संबंधी क्षेत्रों में, जिन तक हम आधुनिक लोग अभी तक नहीं पहुंच पाये हैं। तीसरा, जानकारी के लिये, ताकि हम यह जान सकें कि हमने गलती कहां की थी।

आप ठीक कह रहे हैं कि हाल का भारतीय विज्ञान परोपजीवी एवं बदतर है। आजादी के बाद के विज्ञान के संदर्भ में तो यह विशेष रूप से सही है। इस शताब्दी के अगले पांच दशकों पर दृष्टिपात करें। कुछ महानतम व्यक्तियों में भारतीयों के नाम थे, जैसे एस. रामानुजन, जे. सी.बोस, एस.एन.बोस, सी.वी. रमन, मेघनाद साहा, जो चन्द्रशेखर आदि। परन्तु ये ऐसे लोग थे जो आत्मविश्वासी थे, वे जानते थे कि वे किसी से कम नहीं थे। सबसे बड़ी बात तो यह थी कि ये लोग अपनी ज्ञान परम्परा से जुड़े थे। इतिहास के अध्ययन से हम को यह स्पष्ट जानकारी मिलेगी कि गत शताब्दी के प्रथम पांच दशकों का वैज्ञानिक पुनर्जागरण अगले पांच दशकों में विफल क्यों हो गया।

प्राचीन भारतीय विज्ञान के अध्ययन का एक और कारण है। बीसवीं सदी के महानतम वैज्ञानिक में से एक इर्विन श्रोडिंगर को मात्रा-यांत्रिकी (Quantum Mechanic) के निर्माण में वेदान्त से सीधी प्रेरणा मिली थी। यह वह सिद्धान्त है जो रसायन विज्ञान (Chemistry) जैविक रसायन (Biochemistry), इलैक्ट्रोनिक्स और कम्प्यूटर्स के विशेष ज्ञान के मूल में।

रा. - आप पौराणिक आख्यानों से वास्तविक विज्ञान को पृथक कैसे करते हैं?

सु. - प्राचीन विज्ञान को हमने समीक्षात्मक दृष्टि से देखना चाहिए और यह सुनिश्चित करना चाहिए कि वास्तविक विज्ञान को कल्पना एवं पौराणिकता से अलग रखा जाये। यह वर्तमान युग का एक मिथक है कि भारतीय लोग यथार्थ लेखा-जोखा नहीं रखते थे। इस मिथक को इतनी बार दोहराया गया है कि हम इसमें विश्वास करने लगे। खगोल शास्त्र के क्षेत्र में फ्रांस के श्री रोजर बिलार्ड ने यह दिखा दिया कि यह विश्वास पूर्णतया गलत है। औषधि, रसायन शास्त्र, धातु विज्ञान, कृषि विान आदि क्षेत्रों में हम उच्चकोटि के प्रयोग करते थे। यूरोप में ज्ञान का अभ्युदय 17वीं शताब्दी में हुआ था, परन्तु हम उसके पहले से ही ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में बहुत आगे थे।

रा. - अपने शोध में आपको सर्वाधिक आश्चर्य कहां हुआ? या दूसरे शब्दों में, आपको अप्रत्याशित खोज के अनुभव कहां मिले?

सु. - अप्रत्याशित खोज का असली अनुभव मुझे तब हुआ जब मैंने यह शोध किया कि ऋग्वेद का गठन खगोलशास्त्रीय योजना के अनुसार हुआ था। यह शोध अचानक ही हुआ था, परन्तु जब उस शोध में स्थायित्व आया तो यह स्पष्ट हुआ कि उस शोध का श्रेय वास्तव में वेदों के प्रत्यक्ष या परोक्ष उल्लेखों को जाता है। विस्मय यह था कि वेद के प्राचीन रहस्य को खोलने की चाभी मेरे हाथ में थी। कर्मकाण्ड एवं पौराणिकता का अर्थ समझ में आने लगा। और इससे भारतीय विज्ञान के छुपे पहलुओं के द्वार खुल गये जिनसे हमको भारत की तथा शेष प्राचीन विश्व की सर्वाधिक समझ के निहित अर्थ स्पष्ट होने लगे।

रा. - आपने सिंधु-सरस्वती सभ्यता एवं इस अनुमान पर कि सरस्वती नदी वास्तव में अस्तित्व में थी, बहुत काम किया। आपने इस विषय पर भी काम किया है कि जिसे सिंधुघाटी की सभ्यता कहा जाता है वह वास्तव में सरस्वती नदी के किनारों पर पनपी थी। कृपया इस पर प्रकाश डालें और बतायें कि इस संदर्भ में नवीन प्रमाण क्या हैं?

सु. - पुरातात्विक उत्खननों से यह निश्चित हो चुका है कि ईसा पूर्व 1900 के आसपास आये भीषण भूकम्प के पहले सरस्वती नदी सिंधु नदी के समानान्तर ही सागर की ओर प्रवाहित हो रही थी, और वो सिंधु तथा गंगा नदियों के साथ मिल गई। ऋग्वेद के काल में सरस्वती नदी को सबसे बड़ी नदी के रूप में महिमामण्डित किया गया है। इससे यह स्पष्ट है कि ऋग्वेद कम से कम ईसा पूर्व 1900 से तो पहले का है।

ऐसे भी अनेक विद्वान हैं जो यह मानते हैं कि ई.पू. 1900 में तो सरस्वती नदी अन्तिम रूप से सूखी थी, सागर की ओर इसका प्रवाह ई.पू. 3200 में रूक गया था। यदि ऐसा था तो यह तथ्य कि यह पाम्परिक कालानुक्रम जो ऋग्वैदिक काल की समाप्ति का समय ई.पू. 3000 को मानता है, सत्य है।

रा. - मैंने अनेक नए उत्खनन स्थलों का अध्ययन किया है जिनमें लोथल, काली बंगान, धोलावीरा, बालू, बनावली, भगवान पुरा, मंदा, आमरी, कुणाली आदि सम्मिलित हैं। कुछ इस प्रकार का चिन्तन चल रहा है कि लोथल, जो समुद्र में जाने वाले बड़े-बड़े जहाजों का बन्दरगाह था, पौराणिक द्वारका का स्थल था जो पानी के अन्दर आए भूचाल एवं तज्जन्य ज्वारीय तरंगों के कारण डूब गया था।

सु. - जी हां। नवीन उत्खनन स्थलों से प्रचुर मात्रा में नई सूचनायें आ रही हैं। हमें मेहरगढ़ को नहीं भूलना चाहिए जो ई.पू. 8000 में था, और जिसका उत्खनन 1970 के दशक में हुआ। सर्वाधिक कौतूहल की बात तो यह है कि गणवेरीवाला एवं राखीगढ़ी के स्थलों का उत्खनन होना अभी शेष है। लोथल क्या महाभारत कालीन द्वारका हो सकता है? यह विश्वसनीय तो प्रतीत होता है, परन्तु अभी तक हमें इसकी निश्चित जानकारी नहीं है।

रा. - आर्यों के आक्रमण सिद्धान्त के विरोध में भी अपने तर्क दिये हैं। इस संदर्भ में हाल में उभरे कुछ विशिष्ट प्रमाणों का उल्लेख कीजिए।

सु. - भारतीय परम्परा में किसी विराम के कई प्रमाण नहीं मिलते। यह दस हजार वर्षों से अनवरत चली आ रही है। मिट्टी के बर्तन बनाने की शैली, कला की अभिव्यक्ति, कंकालों के अवशेष इत्यादि की शैलियों में कोई विराम नहीं

...शेष पृष्ठ 14 पर

Again, it is absolutely factual that there are unforgivable things done in India by the name of caste: that the disparity between rich and poor is shocking, that affluent Hindus have very little concern about their less fortunate brothers, or else have no respect for their environment. But it is also true that there is so much positive things to be written about India, so many great people, so much tolerance, so much talent, so many fascinating subjects. Nevertheless Western journalists seem only to concentrate on the negative. This is the vicious circle of journalism and India: The negative goes from the Indian journalist to the Western journalist ..... and comes back to India under the form of unfriendly reporting......

The recent Sabarmati burning followed by the rioting in Gujarat, showed again the veracity of that phenomenon. Here you had 58 innocent Hindus, the majority of them being women and children, burnt in the most gruesome manner, for no other crime but the fact that they want to build a temple dedicated to the most cherished of Hindu God, Ram, on a site which has been held sacred by Hindus for thousands of years.

When a Graham Staines is burnt alive, all of Indian English press goes overboard in condemning his killers, but when 58 Graham Staines are murdered, they report it without comment. No doubt, the revenge which followed is equally unpardonable. No doubt, Indian and foreign jurnalists who rushed to Gujarat, wrote sincerely: after all they saw innocent women, children, men being burnt, killed, raped. Which decent journalist, who has at heart of reporting truth would not cry out against such a shame? But then history has shown us that no event should be taken out of contxt, and that there is in India, amongst the Hindu majourity, a simmering anger against Muslims, who have terrible persecuted the Hindus and yet manage to make it look as if they are the persecuted.

And once again, the western press coverage of the Gujarat rioting comes back to haunt India: Hindus targeting Muslims, fundamentalism against innocence, minority being persecuted by majority...... But when will the true India be sincerely portrayed by its own journalists, so that the Westen press be positively influenced?

(Gautier is the correspondent in India and South Asia Ouest-France, the biggest circulation French daily (1 million copies) and for LCI, a 24-hour TV news channel. He is also the author of Arise O India and A Western journalist on India.)

पृष्ठ 16 का शेष ...

आया है। अब यदि आप इसकी तुलना ऐसे क्षेत्रों में करते हैं जो आक्रमण झेल चुके हैं, जैसे अमेरिका, तो आपको इन सभी में स्पष्ट विराम दिखाई पड़ेगा। इसके अलावा हाल में जो प्रतीकात्मक कलाकृतियां मिली हैं वे इस बात को सुनिश्चित करती हैं कि जिसे सामान्यतया पुरातन हिन्दूधर्म कहा जाता है उसके मूल तत्व ईसा पूर्व 2500 के सिंधु-सरस्वती सभ्यता में विद्यमान थे। इसके कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं : स्नानविधि, सिन्दूर, चूड़ियां, धार्मिक कर्मकाण्डों में शंख, महिषासुरमार्दिनी, अमूर्त प्रतीकवाद और अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में पशु की प्रधानता।

रा. - आपने तर्क दिये हैं कि आर्यों और द्रविडों के बीच में कोई अन्तर नहीं है, ओर उत्तरी एवं दक्षिणी भारत के बीच सतही अन्तर के नीचे एकीकृत सांस्कृतिक आधार है।

सु. - आर्यों-द्रविडों के बीच के अन्तर का सिद्धान्त 19वीं सदी में चले नस्ल संबंधी प्रवचनों का परिणाम है। इसी नस्लवादी विचारधारा के कारण एक भाषा होने की बात उभरी जिसमें से आधुनिक सारी भाषायें निकलीं। अब भाषाशास्त्री यह मानते हैं कि अतीत में अनेक भाषा परिवार रहे होंगे, और उनका जो अवशिष्ट है वह विभिन्न प्रकार के लोगों एवं भाषाओं के बीच जटिल अन्तर्व्यवहार का प्रतिनिधित्व करता है। उनमें से अनेकों का तो अब अता-पता भी नहीं है। यह भी माना जाने लगा है कि एक अनुमान के अनुसार संस्कृत, ग्रीक एवं लैटिन एक परिवार की हैं। दूसरे अनुमान के अनुसार संस्कृत तमिल और तेलगू एक अन्य परिवार की हैं। भाषा शास्त्री अब भाषायी क्षेत्रों की बात करते हैं। सम्पूर्ण भारत ऐसा एक क्षेत्र है।

अतीत में हम जहां तक जा सकते हैं, सांस्कृतिक दृष्टि से हम भारत के दर्शन करते हैं। यदि कला के इतिहासकार डैविड नैपियर की यह मान्यता सही है कि यूनान को, ईसा पूर्व की दूसरी सहस्त्राब्दी में, दक्षिण भारत से कला संबंधी महान प्रेरणा मिली थी तो हम पाते हैं कि यह एकता कम से कम 4000 वर्ष पुरानी है। यह भी स्मरणीय है कि दक्षिण भारत एवं श्री लंका के तमिल शासक अपने आप को आर्य कहते थे। संस्कृत भाषा में आर्य शब्द का सीधा अर्थ है "सुसंस्कृत"। संस्कृत भाषा मे यह सुप्रसिद्ध सूक्ति है : "सारे विश्व को आर्य बनाओ।" आर्य शब्द का किसी नस्ली या भाषा से कोई सम्बन्ध नहीं है।

क्रमश....

भारतीय मुसलमानों के समक्ष चुनौतियां

–फिरोज बख्त अहमद

गोधरा साबरमती एक्सप्रेस व उसके बाद के प्रकरण ने एक आम आदमी को इस बात पर सोचने के लिये मजबूर कर दिया है कि आखिर यह कौन सी दुःशक्ति है जो समय-समय पर इस प्रकार के विध्वंस पर लोगों को विवश करती है। कितना असंभव सा लगता है यह सोचना भी कि वह लोग जो वर्षों से एक साथ रहते चले आ रहे हैं, पड़ोसी हैं और वक्त-बेवक्त एक-दूसरे के खून के प्यासे हो जाते हैं। सांप्रदायिक दंगे यूं तो भारत के लिये कोई नई चीज नहीं है मगर प्रश्न उठता है कि आखिर यह होते ही क्यों हैं।

1857 के बाद और उससे भी अधिक 1947 में अंग्रेजों ने हिंदुओं और मुसलमानों, हिन्दुओं और सिखों, सवर्णों और निचली कही जाने वाली जातियों में फूट के बीज बो दिये। यही नहीं, क्षेत्रों के आधार पर भी उत्तर और दक्षिण में मानसिक बंटवारा करने का यत्न किया। हिंदू-मुसलमानों को एक-दूसरे से अलग करने में उन्हें सर्वाधिक सफलता मिली। सांप्रदायिक दंगे होने पर अंग्रेज बड़े खुश होते थे। आज उन्हीं अंग्रेजों की भूमिका हमारे राजनेता बड़ी क्षमता के साथ निभा रहे हैं और बेचारी जनता उनके इस घातक खेल का शिकार बन रही है। हमें इस बात को समझना होगा और सबके लिये न्याय व किसी का भी तुष्टिकरण नहीं के सिद्धांत के आधार पर हिंदू-मुस्लिम सद्भाव बढ़ाने के लिये अथक परिश्रम करना होगा। किसी धर्म विशेष को कट्टर बताना छोड़ना होगा क्योंकि सभी धर्म लचीले होते हैं।

6 दिसम्बर, 1992 के बाद से जिस प्रकार मुस्लिम नेतृत्व का बहिष्कार किया गया था, इससे बुद्धिजीवी वर्ग को आशा हुई थी कि शायद वे ही आगे चलकर मुस्लिम नेतृत्व संभालें। मगर कुछ न हुआ और यदि कुछ हुआ तो वह गोधरा, गुजरात में 27 फरवरी को 'साबरमती एक्सप्रेस' में 58 निहत्थे लोगों व कारसेवकों को और उसके बाद सैंकड़ों बेगुनाह लोगों को जिंदा जलाने के रूप में हुआ। अर्थात् हिंदुस्तानी मुसलमानों की वही दशा है जो बिना बादबान वाली नाव की होती है कि बस हवा के सहारे दिशाहीन कभी इधर तो कभी उधर भटक जाती है। इसमें कोई दो राय नहीं कि भारत के हिंदुओं में 80 प्रतिशत हिंदू ऐसे हैं जो सांप्रदायिकता के जहर से बचे हुए हैं। यही कारण है कि आज इस देश में 14 करोड़ (गैर-सरकारी 20 करोड़) मुसलमान रह रहे हैं। उनकी सुविधाओं का विशेष ध्यान रखा जाता है। जिस प्रकार से भारत में रमजान, मुस्लिम त्यौहारों, धार्मिक गतिविधियों आदि की आजादी है, ऐसी आजादी दूसरे देशों में नहीं है। हज पर जाने वाले तीर्थ यात्रियों के लिये सरकार ने विशेष सुविधायें प्रदान कर रखी हैं जिन्हें 'हज सब्सिडी' के नाम से जाना जाता है। जिस प्रकार से हिंदू, सिख व अन्य वर्ग अपने धर्मस्थलों पर लाउडस्पीकरों का प्रयोग कर सकते हैं, उसी प्रकार से मुस्लिम वर्ग भी ऐसा कर सकता है। समस्या तब आती है जब कट्टरपंथी लोग भोले-भाले समाज को अपने शिंकजे में कसना शुरू कर देते हैं।

बाबरी मस्जिद प्रकरण के चलते मुस्लिम नेतृत्व में छाप रखने वाले नेता जैसे शाही इमाम, सैयद शहाबुद्दीन, जफरयाब जीलानी, जावेद हबीब, सुलतान सलाहुद्दीन ओवैसी व कुछ उलेमा अपना अस्तित्व व मर्यादा खो चुके हैं। मस्जिद के विध्वंस के बाद तो कोई भी उनकी आवाज पर लब्बैक कहने वाला नहीं था। अपनी कट्टरवादिता, पुरुत्थानवाद, पुरातनपंथी और भड़काऊ शैली के कारण अन्य वर्गों में तो पहले ही उनकी छवि खराब थी मगर अब अपने संप्रदाय में भी वे अपना विश्वास खो चुके हैं और हाशिये से लगा दिये गये हैं। यदि यही नेता बाबरी-मस्जिद विध्वंस से पूर्व मिल-बैठकर आमने-सामने बात करते और अपना हाथ ऊपर रख विवादित स्थल यह सोच कर हिंदू समाज को दे देते कि चलो राम उनके सबसे बड़े भगवान हैं और यह कि 80 करोड़ हिंदुओं का दिल जीतने का यह बड़ा अच्छा अवसर था, तो हजारों जानें बच जाती। यदि इस तरह की पहल मुसलमानों के प्रतिनिधि स्वयं करते तो इससे अवश्य ही सद्भावना का चलन तो होता ही, भारतीय मुसलमान हिंदुओं से अपने लिये इसके बदले अपने मदरसों, मस्जिदों व विश्वविद्यालयों आदि के लिये कहीं

भी बेहिसाब जमीन ले सकते थे। भारतीय मुसलमानों के लिये कड़वी सच्चाई यह है कि 80 करोड़ हिंदुओं से वे नहीं जीत सकते।

विवादित भूमि को वह हिंदुओं को देकर मामला खुदा के दरबार में अल्लाह तवक्कल तो (खुदा की मर्जी पर) छोड़ देते। मगर अफसोस इस प्रकार की दमदार धारणा और साफ विचारों वाले रहनुमाओं की सदा से ही मुस्लिम संप्रदाय में कमी रही है। बाबरी-मस्जिद प्रकरण के दस वर्ष बाद भी मुसलमानों में सुलझे हुए नौजवान नेता उभर कर नहीं आये हैं। यदि नाममात्र को भाजपा में कुछ मुस्लिम नेता हैं भी तो उनकी न तो मुस्लिम समाज में कोई बात है और न ही सम्मान। उनको मुस्लिम जनता मात्र 'शो ब्वॉयेज' ही समझती है। वहीं पुराने घिसे-पिटे मोहरे आज भी मुस्लिम सियासत के मैदान पर दिखाई देते हैं। अब वे नये साइन बोर्ड लगाकर पुनः राजनीति के इस अखाड़े में आने को पर तोल रहे हैं। कोई इन मसीहाओं से पूछे कि आज तक इन्होंने देश या कौम के कौन से दलिद्र दूर किये हैं।

मुस्लिम नेतृत्व आज कहां खड़ा है? क्या उसकी कोई आवाज है? इस संकट की घड़ी में भी मुस्लिम नेताओं ने क्या कोई सबक सीखा है? यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि वर्तमान मुस्लिम समाज की वास्तविक समस्यायें क्या हैं? उसका वास्तविक संकट क्या है? सभी धार्मिक व बुद्धिजीवियों द्वारा बहस इस मुद्दे पर होनी चाहिए। मुसलमानों में व्यापक स्तर पर इसकी सुगबुगाहट के लक्षण दिख रहे हैं और परंपरागत नेतृत्व के बीच एक बेचैनी भी दिखाई पड़ी है। साथ ही मुसलमानों ने इन परंपरागत नेताओं को घास डालनी छोड़ दी है। अब आवश्यकता इस बात की है कि आम मुसलमानों को यह समझाया जाये कि उनकी आम समस्यायें वही है जो ऐसे किसी भी देश में किसी भी पिछड़े वर्ग की हो सकती है।

कुछ भी हो मगर यह बात अवश्य देखने में आई है कि मुस्लिम बुद्धिजीवी वर्ग जिसमें प्रोफेसर, पत्रकार, वकील, चार्टर्ड अकाउंटेंट, शिक्षक, आर्थिक विशेषज्ञ व वैज्ञानिक आदि शामिल है, गुजरात प्रकरण के बारे में सर जोड़े, बैठे कुछ सोच रहे हैं। आए दिन इन लोगों की विभिन्न गोष्ठियां होती हैं और भविष्य में निर्माणात्मक कार्य करने की प्रणालियों की बात की जाती है। इनमें कुछ स्वयंभू मुस्लिम नेता भी शामिल हैं। ये लोग कहते हैं कि नेतृत्व की चाह में कोई नया मंच, खड़ा करने की उनकी या इन गोष्ठियों में भाग ले रहे अन्य बुद्धिजीवियों की कोई योजना नहीं है। उनकी बैठकें राष्ट्रीय एकता व सांप्रदायिक सौहार्द के लिये सामूहिक प्रयास भर हैं। मगर आज हो यह रहा है कि कोई तो उत्तर प्रदेश में मुसलमानों का मसीहा बना हुआ है तो कोई इसी राज्य में दलितों का मसीहा बना हुआ है। उधर बिहार में तो राजनीति और राजनेताओं का रंग ही कुछ और है। अलग-अलग वर्गों में लोगों को बांट देने से वैमनस्य बढ़ेगा। हिंदुस्तानियों के लिये बेहतर यह है कि चाहे वे किसी जाति धर्म या वर्ग के हों, संगठित होकर एक सर्व-धर्म हिंदुस्तानी संघ बनाकर विघटनकारी शक्तियों का डट कर मुकाबला करें।

मुसलमानों को अपनी सोच और रहन-सहन में क्रांति लानी होगी। पिछले 55 वर्षों में उन्होंने जो गंवाया है अब मात्र 50 महीनों में पाने की चेष्टा करनी होगी। जो कुछ थोड़ा बहुत मध्यवर्ग मुस्लिम संप्रदाय में आजादी के बाद पनपा था, या तो वह सांप्रदायिक दंगों की चपेट में आ गया या उसके पास न वह मंच था न व सत्ता और न ही धर्म की अफीम जो अन्य मुसलमानों के पास थी। इस कटु सत्य का चुभता हुआ आभास पहली बार शाहबानो केस में हुआ और उस समय पढ़े-लिखे मुसलमानों को स्वयं प्रतीत हुआ कि वे लोग अलग-अलग खड़े एक ही बात सोच रहे हैं मगर उनकी बातों का लाभ आम मुसलमान नहीं उठा सकता और न ही उस तक उनकी आवाज पहुंच रही है। कारण यह कि बीच में मौलवी थे और 'मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड' था और इन्होंने शिक्षित मुसलमानों को यह कह कर रद्द कर दिया कि वे मुसलमान हैं ही नहीं। इसके लिये खुले दिल के धार्मिक मुसलमानों और बुद्धिजीवियों ने पुरातनपंथियों और कट्टरवादियों को ललकारा। जब पंथनिरपेक्ष शक्तियां संप्रदायवादी ताकतों से जूझ रही हैं तो मुस्लिम समाज का भी कर्तव्य है कि वह अपने कट्टरपंथियों से अलग पंथनिरपेक्षता का परिचय दे। देश के बंटवारे के बाद

मुस्लिम समाज को यह भूत भ्रमवश सताता रहा है कि अगर वे अपने सामाजिक नियमों में परिवर्तन करेंगे तो उनका अस्तित्व ही समाप्त हो जायेगा। यही कारण है कि वे छोटे छोटे सामाजिक सुधारों को मजहबी बुनियाद को क्षति पहुंचाने की बात कह कर रोकते रहे हैं जिसके कारण मुस्लिम समाज का पिछड़ापन, गरीबी और तंगदिली बढ़ते गये। इससे सबसे ज्यादा लाभ मुसलमानों के तथाकथित नेताओं को हुआ है जबकि नुकसान आम मुसलमान का हुआ है। यह याद रखना होगा कि एक आम मुसलमान का नुकसान भारत का नुकसान भी है। इतनी बड़ी आबादी को पिछड़ा रख कोई देश भी प्रगति नहीं कर सकता।

मुसलमानों को समयानुसार प्रगतिशील होना होगा। एक हाथ में यदि कुरान और हदीस हों तो दूसरे हाथ में कम्प्यूटर होना चाहिए। मुसलमानों का प्रश्न है कि आखिर वे कौन हैं जो इस्लाम के नाम पर अपनी राजनीतिक दुकानें चमका रहे हैं और दादागीरी कर रहे हैं और मुसलमान समाज को आग में झोंकने के लिये आतुर हैं? आखिर इनका लक्ष्य क्या है? इनमें कई सांसद हैं तो कई सत्ता की सीढ़ियां चढ़ने के लिये व्याकुल हैं। जिस समय मुसलमान झुलस रहे थे तो उनके नेता वातानुकूलित बंद कमरों में अपनी भावी भूमिका की रिहर्सल में जुटे थे। आज मुसलमानों को सख्त जरूरत है कि वे इस्लाम की बहसों में न पड़ें बल्कि उन इमामों की राह पर चलें जिन्होंने मानवता के लिये आवाज उठाई थी। इसलिये शिक्षा बहुत जरूरी है। वरना धर्म कभी शाही, कभी सरकारी कभी राजनीतिक आवश्यकताओं के अनुसार अपना चोला बदल, अपने बुनियादी उसूलों से हट अवसरवादी नेताओं के जरिये हजार रंग बदलता रहेगा और जनता अपनी दिशा खो बैठेगी। भारत में मुस्लिम राजनीतिक नेतृत्व बहुत कुछ बिचौलिये की भूमिका निभाता है, इसलिए उसमें वे सारी बुराईयां भी होती हैं जो बिचौलिये का कार्य करने वाले किसी भी व्यक्ति या तंत्र में हो सकती हैं। मुसलमानों को अल्पसंख्यक प्रकोष्ठ भी दिये गये और अल्पसंख्यक आयोग भी परंतु मुस्लिम समुदाय की हालत बद से बदतर होती चली जा रही है।

देश का मौजूदा मुस्लिम नेतृत्व मुसलमानों के अंदर कुछ किसी मंजर में से नहीं उभरा। हिंदू राजनीतिज्ञों की वोट राजनीति की करामात ने इसे समय समय पर मुस्लिम समुदाय पर थोपा है। इन नकली मुस्लिम नेताओं के कारण ही भारत का मुसलमान केवल पिछड़ा मुसलमान है, मात्र कहलाता है यहां का राष्ट्रीय नागरिक होते हुए भी वह अपनी राष्ट्रीय पहचान नहीं बना पा रहा है। उसे देश की शेष समाज से अलग और तोड़ कर रखने में ही सत्ता राजनीति का स्वार्थ है। यह राजनीति की बाजार में मात्र एक ऐसी भौतिक वस्तु है इसको इस या उस पलड़े में रख दिये जाने से चुनाव और सत्ता की राजनीति की तुला पर संतुलन उस या इस ओर झुक जाता है। मुसलमान स्वयं को किसी एक राजनीतिक दल से जोड़ कर न रखें जैसा कि उनके नेता उनकी पोटलियां बना कर इन राजनीतिक पार्टियों की झोलियों में फेंक देते हैं बल्कि उन्हें सभी प्रकार के गुटों से अच्छे, सौहार्दपूर्ण संबंध बनाये रखने चाहिए।

जब तक हम आपस में मिलकर एक कौम नहीं बनते उस समय तक यहां सांप्रदायिक दंगे, दलितों पर जुल्म, गरीबों का शोषण, तोड़-फोड़ और लूट-पाट की घटनायें होती रहेंगी। न तो देश के गैर मुस्लिम वर्ग को मुसलमानों से यह पूछते रहना चाहिए कि बिन लादेन के बारे में वे क्या सोचते हैं और यह कि क्या पाकिस्तान के लिये उनके मन में कोई नर्म गोशा है आदि। न ही मुस्लिम वर्ग को बिन लादेन को अपना हीरो बनाकर पेश करना चाहिए क्योंकि यदि भारत जैसे देश में वे इस प्रकार की पुनरुत्थानवादी विचारधाराओं का आचरण करेंगे तो धर्म निरपेक्ष गैर मुस्लिम लोग यहां रहते हैं वे मुसलमानों के ऊपर घबराकर खुलते बंद दरवाजे भी बंद कर देंगे और इससे युवा मुस्लिम वर्ग को बड़ी हानि होगी। आने वाले दिनों में मुस्लिम लीडरशीप की बागडोर पढ़े-लिखे बुद्धिजीवी मुसलमानों के हाथों में होनी चाहिए। मुसलमान अब कट्टरवादी नेताओं से घबरा गये हैं और वास्तव में ऐसा नेतृत्व चाहते हैं जो राजगद्दियों पर बैठ कर अपना और अपने परिवार जनों की पीढ़ियों का भविष्य मात्र ही न संवारे बल्कि देश का और उसकी जनता के हित का भी ध्यान रखे।

वनवासियों में रचा बसा है हिन्दुत्व

-डॉ. एडमंड वेबर

भिन्न धर्मों के सिद्धान्तों के अपने तुलनात्मक अध्ययन के निमित्त मैं पिछले 16 वर्षों में कई बार भारत आ चुका हूं। इण्डोनेशिया, थाइलेण्ड, बांग्लादेश पाकिस्तान जैसे अन्य देशों में भी भ्रमण किया है। हर यात्रा के दौरान मुझे पूर्व की संस्कृति और उसमें निहित समृद्धिपूर्ण परम्परा के नित नवीन व मनमोहक दर्शन हुए हैं। विभिन्न परम्पराओं के निरीक्षण से यही ध्यान में आया है कि एशिया महाद्वीप के इस भारतीय उपमहाद्वीप में स्थित सभी पूर्वी देशों के जन-जीवन और संस्कृति पर भारतीय चिंतन, यानी हिन्दू जीवन शैली का प्रभाव है। ये प्रभाव होना स्वाााविक भी है क्योंकि हिन्दू जीवन पद्धति विश्व की सबसे प्राचीन, विकसित और प्रगल्भ संस्कृति से जन्मी है। हड़प्पा व मोहनजोदड़ों के उत्खनन से इस संस्कृति की प्राचीनता और उन्नत होने के स्पष्ट प्रमाण मिले हैं।

इस बार अपने भारत दौरे की अवधि के दौरान आदिवासियों की धर्म, संस्कृति के बारे में यहां के कुछ अल्पज्ञान रखने वाले लोगों द्वारा लिखे गये लेख पढ़े। तब मुझे आश्चर्य हुआ। ठाणे जिले के जव्हार में हुए एक आदिवासी सम्मेलन की खबरें और उस सम्मेलन के निमित्त से कुछ अखबारों में प्रकाशित लेख मैंने पढ़े। उस समय मैं डहाणू और उसके आसपास के परिसर में घूम रहा था। आदिवासी मूलतः हिन्दू नहीं हैं, उनकी हिन्दूकरण की प्रक्रिया उन पर किया गया अन्याय है जैसे विचार सुन या पढ़कर, मैं हंसू या रोऊं मुझे कुछ समझ में नहीं आ रहा था। आदिवासी हिन्दुस्तान के भूमिपुत्र हैं यह सत्य है और यह भी एक ऐतिहासिक सत्य है कि हिन्दुस्तान में रहने वालों को गत हजार वर्षों से 'हिन्दू' की संज्ञा से सम्बोधित किया गया है। तो आदिवासी हिन्दू नहीं हैं, ऐसा कैसे कहा जा सकता है? यहां डहाणू में मैं अंधेर गुरुजी नामक वरिष्ठ सामाजिक कार्यकर्ता से मिला। दोनों पैरों से अपंग अंधेर गुरुजी डहाणू के नजदीक सूत्रकार नामक गांव में पिछले 42 वर्षों से विद्यालय चला रहे हैं। इस पहाड़ी इलाके और वनवासी बस्तियों से भरे क्षेत्र में विद्यालय चलाना आसान नहीं है। फिर भी अंधेर गुरुजी यह काम प्रामाणिकता और दृढ़निष्ठा से कर रहे हैं। गुरुजी से हुई गपशप के दौरान आदिवासी समाज में प्रचलित अनेक प्रथाओं-परम्पराओं के बारे में बहुत ही महत्वपूर्ण जानकारी मिली। उनके साथ मैं डहाणू के पास महालक्ष्मी मन्दिर में भी जाकर आया। स्थानीय आदिवासी समाज के मन में महालक्ष्मी के बारे में निहित श्रद्धाभाव का मैंने स्वयं अनुभव लिया।

अंधेर गुरुजी ने मुझे वारली समाज के एक कलाकार द्वारा रेखांकित कुछ तस्वीरें दिखाईं। कपड़े पर चित्रित विशिष्टतापूर्ण वारली कला मनमोहक थी। उससे भी महत्वपूर्ण थे उस पर रेखांकित चित्र, जो सोलह संस्कारों की विधियों के दर्शन कराते थे। 'सोलह संस्कार' तो हिन्दू जीवन शैली की ही महत्वपूर्ण विशेषता है। यह एक सर्वमान्य सत्य है कि हजारों वर्षों से इन संस्कारों का पालन हिन्दू परिवारों में हुआ है। इन्हीं संस्कारों का पालन वारली समाज में भी किया जाता है और स्वाभाविक रूप से यह उनकी कला में भी व्यक्त होता है। ये उनके हिन्दू होने का क्या पुख्ता प्रमाण नहीं है? फिर भी ऐसी महत्वपूर्ण विशेषताओं को नजरअंदाज कर कुछ लोग जानबूझ कर कहते हैं कि आदिवासी हिन्दू नहीं हैं, यह एक आश्चर्यजनक बात है। ऐसे भ्रामक विचार व्यक्त करने के पीछे उनका उद्देश्य निश्चित रूप से शुद्ध नहीं है। एक तो भारतीय समाज में फूट डालने के पीछे उनका स्वार्थ छिपा है और दूसरी बात यह कही जा सकती है कि अपनी बुद्धि को वे अभारतीय प्रवृत्तियों के चरणों में समर्पित कर चुके हैं।

हिन्दू धर्म, संस्कृति और विचारधारा विश्व की एक अद्वितीय विचारधारा है। उनके अनोखेपन की अनेक विशेषताएं बताई जा सकती है। विश्व की समस्त मानवता के विचारों को समाहित करने की विशालता, उसकी पहली विशेषता है। हिन्दू विचारधारा की मान्यता है कि शाश्वत सत्य की ओर जाने के अनेक मार्ग हो सकते हैं। विश्व का अन्य कोई भी धर्म ऐसी मान्यता प्रतिपादित नहीं करता। इसी मान्यता के कारण हिन्दू धर्म को प्राप्त उदारता और सहिष्णुता केवल हिन्दू समाज या हिन्दुस्तान ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण मानव जाति को मिली एक विलक्षण देन है।

हिन्दू जीवन शैली में परिवार व्यवस्था उसकी एक और विशेषता है। आज विश्व में फैले अति व्यक्तिवाद, स्वच्छंद भोगवाद से हर देश का मानव ग्रस्त है। इस पृष्ठभूमि पर जहां-जहां हिन्दू रहते हैं (और वे विश्व में हर जगह फैले हैं) वहां-वहां उनके द्वारा संरक्षित परिवार-व्यवस्था के मूल्य वहां के समाज के लिये आकर्षण का विषय हैं परिवार-व्यवस्था और विवाह संस्था का अनोखापन ही हिन्दू समाज की संगठित रचना का प्रमुख शक्ति स्थान है। हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक फैले विस्तृत भूभाग पर हिन्दुस्तान

का समाज जीवन कई पीढ़ियों से फला-फूला है। इसलिए स्वाभाविक रूप से भौगोलिक परिस्थिति, रीति-रिवाज, प्रथा, परम्परा, भाषा, वेशभूषा आदि सभी बातों से भारतीय समाज जीवन में अनोखी विविधता दिखाई देती है। फिर भी यहां का समाज हजारों वर्षों से एक राष्ट्र के रूप में संगठित रहा है। भारतीयों को यह कभी भूलना नहीं चाहिए कि हिन्दू दर्शन द्वारा संवर्धित सहिष्णुता, विशालता और उदारता ही इस आन्तरिक एकात्मता का रहस्य है।

स्त्री को दिया जाने वाला सम्मान, प्रतिष्ठा और आदर का स्थान भी हिन्दू चिन्तन की एक विशेषता है। लक्ष्मी, काली माता जैसी देवियों के प्रतीक से भी हिन्दू परम्परा ने समाज के मानस में स्त्री के लिये गौरव का भाव पनपाया है। लक्ष्मी विष्णु पत्नी हैं, यह सच है, फिर भी, उसका व्यक्तित्व और पहचान स्वतंत्र और स्वयंभू है। बंगाल में काली माता के मंदिर में भी मुझे यही अनुभूति हुई। सृजन और विनाश दोनों ही प्रक्रियायें काली माता के चरणों में है, शिव की पत्नी होना उसके परिचय का एक पहलू मात्र है। उसके मंदिर में काली की भव्य प्रतिमा के पास शिव की छोटी-सी पिण्डी प्रतिष्ठापित की होती है अन्य धर्मों में स्त्री को ऐसा गौरवपूर्ण स्थान देने की बात नहीं मिलती। इसलिए मानवता के विकास की दृष्टि से हिन्दू धर्म एक गौरवपूर्ण धर्म है। इस तथ्य को अब विश्व भर के विद्वान स्वीकार करने लगे हैं।

दुर्भाग्य से अपने पास श्रेष्ठतम विचार धन होने की जानकारी भारतीयों को ही नहीं है। इस दृष्टि से अच्छे प्रयास करना अत्यन्त आवश्यक है। इसी दिशा में चल रहे कुछ प्रयास भी मुझे इस बार के भारत-भ्रमण में देखने को मिले हैं। ऊंची पहाड़ियों में बसे और समाज की मुख्य धारा से दूर रहने वाले वनवासी बन्धुओं में शिक्षा का व्यापक प्रसार करने के उपक्रम वनवासी कल्याण आश्रम, विश्व हिन्दू परिषद् और उनके विभिन्न सहयोगी संगठन सम्पूर्ण देश भर में चला रहे हैं, यह महत्वपूर्ण है। अंधेर गुरु जी द्वारा सूत्रकार में चलाया जा रहा विद्यालय आकार और विस्तार में भले ही छोटा हो फिर भी उसका मूल्य बहुत ही बड़ा है। ऐसे उपक्रमों का जाल देश के हर भाग में फैलाने के लिये कठोर प्रयास करने की नितांत आवश्यकता है।

(लेखक जर्मनी के Johann Wolfgang, Goethe विश्वविद्यालय के धर्मशास्त्र विभाग के प्रोफेसर हैं।)

पृष्ठ 10 का शेष ...

भवन पहुंचने का आग्रह किया। दोनों ही प्रशासनिक अधिकारियों के मौके पर पहुंचने के बाद परिषद् के प्रदेश मंत्री नीरज जैन से उनकी वार्ता कराई गई। इसमें प्रशासन ने पुलिस की ओर से छात्रों पर भांजी गई लाठियों को मजिस्ट्रेट जांच कराने तथा चोटिल पदाधिकारियों की शिकायत पर दोषी पुलिसकर्मी अथवा अधिकारी के विरुद्ध पुलिस में प्राथमिकी दर्ज कराने की मांग स्वीकार कर ली। प्रशासन से मिले आश्वासन के उपरान्त छात्रों का उग्र प्रदर्शन नियंत्रित हो गया।

इस दौरान परिषद् की ओर से माध्यमिक शिक्षा बोर्ड अध्यक्ष के नाम एक छह सूत्री ज्ञापन भी प्रशासन को सौंपा गया। जिसमें आधारभूत ढ़ांचा तैयार किये बिना कम्प्यूटर शिक्षा को अनिवार्य बनाने की निंदा की गई। बोर्ड पाठ्यक्रमों से छेड़छाड़ पर असंतोष व्यक्त किया गया। परीक्षा प्रश्न पत्रों के निर्माण तथा उत्तर पुस्तिकाओं के मूल्यांकन को विश्वसनीय बनाये जाने बोर्ड कार्यालय में व्यवस्था कायम करने, परीक्षा प्रणाली की अनियमितताओं को दूर करने आदि मांगें शामिल की गई हैं। उल्लेखनीय है कि भीलवाड़ा व अजमेर जिले से लगभग 30 बसों में भरकर विद्यालयों के छात्र बुधवार की सुबह से अजमेर पहुंचना शुरू हो गये थे। जहां स्थानीय लोको ग्राउण्ड पर सभी एकत्रित हुए व रैली के रूप में बोर्ड भवन पहुंचे।

अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद्, राजस्थान प्रदेश द्वारा इस वर्ष सम्पूर्ण प्रदेश में शैक्षिक अराजकता व अनियमितताओं के विरोध में आंदोलन चलाने का निश्चय किया गया। छात्रसंघ चुनावों के पश्चात् 25 सितम्बर को प्रदेश के सभी निर्वाचित प्रतिनिधियों का सम्मेलन हुआ। जिसमें 224 प्रतिनिधियों ने भाग लिया व आंदोलन हेतु योजना व मुद्दों पर विचार हुआ।

प्रथम चरण में छात्र जागरण हेतु पत्रक वितरण किया गया। द्वितीय चरण में सभी महाविद्यालयों में सभा, धरने, प्रदर्शन किये गये। प्रदेशव्यापी शैक्षणिक बन्द 123 स्थानों पर सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। उदयपुर में छात्र रैली व प्रदर्शन में 5 जिलों के 48 स्थानों से 3000 छात्र, 150 छात्राओं ने भाग लिया। कोटा में 5 जिलों के 58 स्थानों पर 7750 छात्र-छात्राओं ने प्रदर्शन में भाग लिया। बांसवाड़ा जिले में हुए प्रदर्शन में 600 छात्रों ने भाग लिया।

पोटा

हम लम्बे समय से आतंकवाद के विद्रूप चेहरे को देख रहे है। इतिहास बताता है कि यह लगभग 30 वर्ष पहले शुरू हुआ जब कुछ धर्मान्धों ने जेहाद के नाम पर कुछ इजराइली खिलाड़ियों की हत्या की।

जेहाद का यह वैश्वीकरण है। सी.एन.एन. के एक पत्रकार पीटर बर्गन ने Holy war Incorporated नामक एक पुस्तक लिखी है, जिसमें उसने नई उभरती विश्व व्यवस्था में विश्व नागरिकों को कॉस्मोक्रेट (Cosmocrat) नाम दिया है। ये कॉस्मोक्रेट, प्रबंधन विशेषज्ञ, विश्व में कहीं भी जाते है तथा वहीं के अनुकूल बन जाते है।

दुर्भाग्यवश, नितांत भिन्न, विध्वंसक मार्ग पर जेहादियों ने भी आज वैश्विक रूप ग्रहण किया है। बिन लादेन का तंत्र भी इन्हीं कॉस्मोक्रेट्स की भांति प्रौद्योगिक प्रवीणता को उतनी ही मान्यता देता है। उन्हीं की तरह विश्व के अधिकांश देशों में व्याप्त है। विमान अपहरण का घटनाक्रम जो कंधार में समाप्त हुआ, ने अलकायदा, तालिबान, पाकिस्तान तथा जम्मू-कश्मीर के आतंकवाद के बीच संबंधों का खुलासा किया।

कलाशनिकोव और कुरान का यह खतरनाक मेल गत अनेक वर्षों से विश्व के लिये सिर दर्द बना हुआ है। पीटर बर्गन के शब्दों में यह Holy war Incorporated है। आज जहाँ भी संघर्ष है, उसका कारण जेहादी हैं। भले ही वह चेचेन्या हो, कश्मीर हो, बोस्निया हो अथवा इंडोनेशिया हो। भारत में यह तत्व बेहद सक्रिय है। 12 मार्च 1993 को मुंबई में एक साथ 12 स्थानों पर बम विस्फोट हुए। हताहतों की संख्या सैकड़ों में है। इसके बाद चेन्नई, दिल्ली आदि स्थानों पर विस्फोटों की एक शृंखला चली।

कुछ समय पूर्व मुझे केन्द्रीय गृह राज्य मंत्री श्री आई. डी. स्वामी के साथ, कश्मीर में कुपवाड़ा जाने का अवसर मिला। वहां कई हजार लोग एकत्र हुए जो आतंकवाद के विरुद्ध लड़ने के इच्छुक हैं। राज्य मंत्री महोदय ने सीमापार से जारी आतंकवाद के विरुद्ध उनके प्रयासों की प्रशंसा की किन्तु साथ ही यह भी कहा कि हमें एकसाथ सैकड़ों मोर्चों पर आतंकवाद के विरुद्ध लड़ना पड़ रहा है। सीमा क्षेत्र के निवासी इस आग का सामना कर रहे हैं। साथ ही, शेष देश के निवासी भी अपने स्थानों पर ही आतंकवाद से मुकाबिल हैं।

11 सितम्बर की घटना के कारण देर से ही सही, विश्व इस खतरे के प्रति सचेत हुआ। अमेरिका अपनी नींद से जागा और अपने ही पैदा किये हुए दानव से जूझना शुरू किया।

प्रश्न है कि हम अपने संप्रभु राज्य में इससे संघर्ष कैसे करें? मौलिक संवैधानिक ढांचे के अंतर्गत हम कानून के नियमों से शासित होते है। राज्य की निरंकुश कार्रवाई निषिद्ध है। राज्य की कार्रवाई को एक वैध कानूनी आधार चाहिये।

पूर्व में TADA कानून था जिसे निरस्त हो जाने दिया गया। संभव है इसका दुरूपयोग हुआ हो। संभव है गलत निर्णय हुए हों। किन्तु आज उसके स्थान पर एक शून्य है। साधारण परिस्थितियों के लिये बनाये गये Criminal Law के सहारे इस वैश्विक आतंकवाद का सामना नहीं किया जा सकता। पूरा विश्व आतंकवाद के विरुद्ध कड़े कानून बनाये जाने की जरुरत महसूस कर रहा है। इजराइल में तो 1948 से ऐसा कानून लागू है। इंग्लैंड ने वर्ष 2000 में अपना Terrorism Act बनाया। October 2001 में कनाडा ने Anti-Terrorism Act पारित किया। फ्रांस ने Anti-Terrorism Law का निर्माण Larger Security Bill के अंतर्गत किया। संयुक्त राज्य अमेरिका का अपना कानून है जिसमें आर्थिक आतंकवाद भी शामिल है। साथ ही उसने Financial Anti Terrorism Act भी पारित किया है। जापान में Anti Terrorism Special Measures लागू हैं। सनद रहे, पाकिस्तान ने भी 1999 में Anti-Terrorism Ordinance पारित किया है।

संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् ने दिनांक 20 सितम्बर 2001 को प्रस्ताव क्र. 1373 पारित किया है जिसमें आतंकवाद के उन्मूलन के लिये आतंकवाद को आर्थिक मदद सहित सभी प्रावधान जोड़े गये हैं।

Suppression of Terrorist Financing Convention, Suppression of Terrorist Bombing Convention तथा सार्क (SAARC) द्वारा आयोजित Regional Convention on Suppression of Terrorism आदि सम्मेलन आतंकवाद के प्रति बढ़ती चिंता को व्यक्त करते हैं।

आतंकवाद को हमने पंजाब में देखा है, पूर्वोत्तर राज्यों तथा जम्मू-कश्मीर में हम इसका सामना कर रहे हैं। आंध्रप्रदेश, मुंबई, दिल्ली, चेन्नई, कोयम्बटूर तथा अन्य अनेक स्थान आतंकवादियों की गिरफ्त में हैं।

पूर्वोत्तर में कई स्थानों पर प्रशासन आतंकवादियों की मुट्ठी में है। नागरिक उनके संरक्षण में रह रहे हैं तथा सुरक्षा राशि चुका रहे हैं। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के चार समर्पित कार्यकर्ताओं की निर्दयतापूर्वक हत्या की गई। इस पर मानवाधिकारवादियों की खामोशी बनी रही।

भाड़े के जेहादियों ने जम्मू-कश्मीर की विधानसभा को भी नहीं छोड़ा। गत् 13 दिसम्बर 2001 को भारतीय लोकतंत्र के प्रतीक इस भवन तक वे पहुंच गये। गत् 15 वर्षों में हमने 61,000 से अधिक नागरिकों तथा 8000 से अधिक सैनिकों को खोया है। इन घटनाओं में प्रयुक्त विस्फोटकों की मात्रा का अनुमान नहीं लगाया जा सकता लेकिन जब्त किये गये विस्फोटकों की मात्रा भी 48,000 किलोग्राम से अधिक है।

उपरोक्त पूरे परिदृश्य को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत विधेयक पर विचार करना चाहिये। इसके प्रावधान संविधान के दायरे में हैं। मानवाधिकारों के हनन पर बल है किन्तु वह भी हमारे संविधान में प्रतिष्ठित हैं। विधेयक का अनुच्छेद 3 आतंकवाद की व्याख्या करता है तथा आतंकवादी कृत्यों पर दण्ड को भी दर्शाता है।

टाडा (TADA) के अंतर्गत आतंकवाद की संकीर्ण व्याख्या की गई थी जिसके अनुसार आतंकवादी गतिविधि को सम्प्रदायों के बीच वैमनस्य फैलाने से जोड़ा गया था। इसके कारण उच्चतम न्यायालय के समक्ष पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी की हत्या को भी आतंकवादी कृत्य नहीं ठहराया जा सका क्योंकि वहां साम्प्रदायिक विद्वेष नहीं था। पोटा विधेयक में इस कमी को दूर किया गया है।

आतंकवाद को बढ़ाने के लिये धन जुटाने को भी विधेयक में आतंकवादी गतिविधि माना गया है तथा उसके लिये भी समान दण्ड व्यवस्था है। अपराधी गुटों, उनके शरणदाताओं उनकी संपत्ति का व्यवहार करने वाले आदि को भी इसके अंतर्गत दंड का भागी बनाया गया है।

प्रभावी जांच के लिये, उनकी संपत्ति जब्त करने के लिये तथा विशेष अदालतों में तेज कार्यवाही के लिये समुचित प्रावधान इसमें जोड़े गये हैं। आतंकवादी संगठनों से निपटने के विषय में एक पृथक अध्याय जोड़ा गया हैं। जहां तक इन संगठनों पर प्रतिबंध का सवाल है, नागरिकों के संवैधानिक अधिकारों को ध्यान में रखा गया है तथा आवश्यक सुरक्षा उपाय अपनाये गये हैं।

संसदीय सलाहकार समिति में श्री शिवराज पाटिल, श्री गुलाम नबी आजाद तथा श्री सोमनाथ चटर्जी आदि अनेक सांसदों ने पार्टी-लाइन से ऊपर उठकर एण्टी-टेररिस्ट लॉ की सिफारिश की थी। आज विपक्ष की चर्चा का केन्द्र बिन्दु मानवाधिकार बना है। आतंकवादी के मानवाधिकार हैं किन्तु पीड़ित के नहीं। भारत में मानवाधिकारवादी कार्यकर्ताओं का यह सिद्धांत है, ऐसा लगता है। उदाहरणार्थ, दो लाख हिन्दू जो अपनी ही भूमि पर शरणार्थी बने हैं, उनके मानवाधिकार नहीं है। पर उनकी हत्याओं में लिप्त लोगों का संरक्षण आवश्यक है। यह बौद्धिक बेईमानी को दर्शाता है। समान बेईमानी अरुंधती राय के वक्तव्य का समर्थन और विहिप की निंदा में है।

महाराष्ट्र, कर्नाटक व पश्चिम बंगाल आदि राज्यों में ऐसे ही कानून बने हैं तथा संसद में विपक्ष में बैठे लोगों ने ही इसका समर्थन किया है। आतंकवाद के खिलाफ एक अंतर्राष्ट्रीय सहमति बनी है। हम इसे मजबूत करें।

(प्रस्तुत लेख श्री बाल आपटे, सांसद, राज्यसभा द्वारा सदन में पोटा लागू करने के मुद्दे पर हुई बहस के अवसर पर दिये गये भाषण पर आधारित है। श्री आपटे तीन दशक से अधिक समय तक अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् के कार्य से प्रत्यक्ष जुड़े रहे तथा परिषद् के राष्ट्रीय अध्यक्ष के दायित्व का निर्वाह किया।)

नेपाल में माओवादी कहर और हम

-शंकर शरण

(लेखक परिचय?)

आठवें दशक में निकारागुआ में सैंडिनिस्ता की तानाशाही थी। क्रूर दमन चक्र चल रहा था। प्रेस पर पाबंदी थी। पर दुनिया भर के वामपंथी उसका सिर्फ इसलिए समर्थन करते थे, क्योंकि सैंडिनिस्ता अमेरिका-विरोधी था। इस पर निकारागुआ के प्रसिद्ध कवि और पत्रकार पाब्लो क्वाद्रा ने एक बार कहा था 'यह आदमी (गुंथर ग्रास) निकारागुआ में क्यों एक ऐसी व्यवस्था का बचाव करता है, जैसी वह अपने देश में एक क्षण भी बर्दाश्त नहीं कर सकता?'

यह टिप्पणी हू-ब-हू हमारे उन बुद्धिजीवियों पर लागू होती है जो नेपाल या भारत के माओवादियों का नियमित बचाव करते हैं। क्या वे आंध्र, झारखंड या नेपाल के उन क्षेत्रों में रहना पसंद करेंगे जहां माओवादी हुक्म चलता है? जहां वे सुरंगें बिछाते हैं, फिरौती वसूलते हैं, अपनी अदालतें लगाकर जिस किसी को मौत की सजा सुनाते हैं? पुल-भवन-बिजली घरों को उड़ा देते हैं। क्या वहां वे बुद्धिजीवी रहना चुनेंगे जो दिल्ली के सुखदायक सभागारों में इत्मीनान से माओवादियों के पक्ष में भाषण देते हैं? 30 जनवरी को पटना से इंडिया एब्रोड न्यूज सर्विस की रिपोर्ट थी कि माओवादियों ने गया, औरंगाबाद, जहानाबाद, रोहतास और नालंदा के कई किसानों को दस दिन के अंदर 50-50 हजार रुपये देने, नहीं तो जान गंवाने की धमकी दी है। इन किसानों की कुल आमदनी यहां के अनेक रेडिकल पत्रकारों-लेखकों की आय का दशांश भी नहीं। प्रश्न है-ऐसी फिरौती और दादागीरी के क्षेत्र में रहना इन बुद्धिजीवियों को स्वयं गवारा होगा? नहीं, क्योंकि अनगिनत सुख-सुविधाओं के बावजूद जे.एन.यू. में वे अपनी मुश्किलों पर आक्रोश प्रकट करते देखे जाते हैं। उनके इलाके में कोई शोहदा आकर सीटी भी बजा जाए तो वे अपनी सुरक्षा के लिये चिंतित हो उठते हैं। मगर गुंदूर, आरा या नेपाल में आम लोग जिस नक्सली-माओवादी आतंक में जी रहे हैं, उसे 'आतंक' कहा जाना भी उन्हें गवारा नहीं! यह कैसी बौद्धिकता है!

17 दिसम्बर, 2001 को यहां गांधी शांति प्रतिष्ठान में एक गोष्ठी में हमारे कुछ जाने-माने लेखक-पत्रकारों ने ठीक यही भाषण दिया कि नेपाल में माओवादी कार्रवाइयों को आतंकवाद कहना गलत है। एक लेखक का तर्क था कि आतंकवादी उन्हें कहा जाता है, जिनका सांस्कृतिक-सामाजिक आधार नहीं होता। तब अल-कायदा, हम्मास और जैशे-मौहम्मद को भी आतंकवादी कहना असंभव हो जायेगा, क्योंकि उनका मजबूत सामाजिक-सांस्कृतिक आधार है। उसी गोष्ठी में दूसरे पत्रकार ने कहा कि भारत को नेपाल के अंदरूनी मामलों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, अर्थात् माओवादियों से निपटने में नेपाल सरकार को कोई मदद नहीं देनी चाहिए। यह कहने वाले वही लोग हैं जिन्होंने सिर्फ छः महीने पहले नेपाल के एक अंदरूनी मामले में बुरा हस्तक्षेप किया था।

पिछले जून में नेपाली अखबार 'कांतिपुर' में भूमिगत माओवादी नेता बाबूराम भट्टाराई (जे.एन.यू. शिक्षित) ने नेपाली राजपरिवार हत्याकांड का आरोप भारत सरकार पर लगाया था। उसमें भारत के खिलाफ और भी अनर्गल विषवमन था। तब नेपाल सरकार ने उसके संपादक-प्रकाशक युवराज घिमिरे को सामाजिक अशांति फैलाने, पड़ोसी देश के प्रति दुष्प्रचार कर संबंध बिगाड़ने के आरोप में गिरफ्तार कर लिया था। यह एक वैध सरकार की वैध कार्रवाई थी। लेकिन इस पर भारत के वामपंथी और चित्र-विचित्र बुद्धिजीवी नेपाल सरकार के खिलाफ उठ खड़े हुए। 'प्रेस स्वतंत्रता' के नाम पर घिमिरे को रिहा करने के लिये दबाव डाला। यह नेपाल का आंतरिक मामला नहीं था? था, मगर जब भारत की निंदा होती हो, कितनी भी झूठी और शरारतपूर्ण ही सही, उसके पक्ष में खड़ा हो जाना ही हमारे वामपंथ का प्रधान कर्त्तव्य है। यह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की बात नहीं थी, क्योंकि जब चीन सरकार वही कुछ करती है, किसी को गिरफ्तार ही क्यों, विरोध करने वालों पर टैंक भी चलवा देती है तो हमारे इन रेडिकलों के मुंह से बोल नहीं निकलते। उनका अभिव्यक्ति प्रेम तब उमड़ता है जब नुकसान, बदनामी भारत सरकार की होती हो। 'आंतरिक मामले में हस्तक्षेप' या 'प्रेस स्वतंत्रता' पर उनके दोहरे रुख को सिर्फ इसी पैमाने से समझा जा सकता है।

आखिर नेपाल में हो क्या रहा है? 17 फरवरी, 2002 को वहां माओवादी हमलों में सिर्फ एक दिन में 200 लोग मारे गये। यह अब तक की सबसे बड़ी कार्रवाई थी। मारे जाने वालों का दोष यह था कि वे नेपाल की चुनी गई सरकार के नौकर थे। 1996 से अब तक माओवादी हिंसा का एकमात्र उद्देश्य सत्ता पर कब्जा करना है-किसी खास समस्या का समाधान, या जनता की मांग की पूर्ति जैसा कुछ नहीं। उन्हें बहुमत का समर्थन बिल्कुल नहीं है। 1994 के चुनाव में वे लड़े थे, पर कुछ ही सीटें मिलीं।

पूरे नेपाल में उनकी काडर संख्या दो हजार से अधिक नहीं, जबकि उस देश की आबादी ढाई करोड़ है। वे चुनाव में नहीं जीत सकते, लोकतंत्र से नहीं तो जबरन, मगर उन्हें सत्ता चाहिए। इसलिए वे नेपाल को तबाह कर रहे हैं। ध्यान रहे तबाही के लिये ज्यादा लोगों की जरूरत नहीं होती! भारत में वामपंथी विश्लेषण जब यहां माओवाद को 'भूमि-समस्या' से जोड़ता है, तो परले दर्जे का भ्रम फैलता है। भूमि हो या पैसा या सत्ता-उसका माओवादियों के हाथ में न होना ही समस्या है। उन्हें अपने मनमाने प्रयोग समाज पर करने के लिये निरंकुश सत्ता चाहिए, यह मूल बात है। नेपाल के माओवादियों का अध्ययन इसकी पुष्टि करता है।

1 दिसंबर, 2000 को नेपाल के रुकुम जिले में माओवादियों ने अपनी सत्रह सदस्यीय सरकार की घोषणा भी कर दी। इसने पूरे नेपाल पर अधिकार को अपना लक्ष्य बताया। अपनी भविष्य की नीतियां भी घोषित कीं। अधिकांश बातें विदेश नीति से संबंधित थीं, जिनका मुख्य स्वर भारत-विरोध था और तेवर शेखचिल्लियों जैसे। उन्हें पढ़कर लगता है, मानो माओवादियों के सत्ता में आते ही संयुक्त राष्ट्र से लेकर आसपास के देश उनकी परिकल्पनाओं के आगे नतमस्तक हो जायेंगे।

खैर, यह तो तब की बात है जब माओवादी काठमांडू पर काबिज होंगे। फिलहाल जहां उनका दबदबा है, वहां वे क्या कर रहे हैं?पहला, उन्होंने स्कूलों में संस्कृत की पढ़ाई बंद करवा दी। दूसरा, राष्ट्रगीत गाने पर प्रतिबंध लगाकर एक अपना दिया गीत गाने का आदेश जारी किया। एक इंटरव्यू में वहां के माओवादी नेता कॉ. गौरव ने अपनी 'सरकार' की यह उपलब्धियां गिनाई। 'हमारी सबसे बड़ी उपलब्धि लोक सरकार की स्थापना ही किसी क्रांति का केन्द्रिय काम है। यही क्रांति का अंतिम लक्ष्य भी है। हमारा स्थानीय शासन माओ के बताये रास्ते पर बना है। माओ ने कहा था कि गांवों द्वारा शहरों को घेर लेना चाहिए। हम यही कर रहे है। हमारी दूसरी सबसे बड़ी उपलब्धि लोक युद्ध के सशस्त्र दस्ते बनाना है। माओ ने कहा था कि यह दस्ते ही लोगों की एकमात्र संपत्ति है। इसके बिना लोगों के पास कुछ नहीं। वर्ग संघर्ष का मुख्य लक्ष्य वर्ग शत्रुओं का खात्मा करना है। माओ ने कहा था ....'

नेपाली माओवादियों के भाषणों, दस्तावेजों में वह कुछ नहीं मिलेगा जो उनके समर्थन में हमारे वामपंथी अपनी उर्वर कल्पना से यहां बोलते-लिखते हैं। वहां लोगों की किसी खास समस्या या उत्कट इच्छा का जिक्र नहीं है। जो नेपाल सरकार पूरी नहीं कर रही। सिर्फ एक बात है-माओवादियों को सत्ता चाहिए ताकि वे माओ के दिये गये विचित्र खाकों के अनुसार वही मनमाने प्रयोग करें जो चीन, कंबोडिया और उत्तर कोरिया में किये गये। जिसके परिणामस्वरूप करोड़ों निरीह मारे गये और भीषण तबाही हुई। आज स्वयं चीन उस दुःस्वप्न को भुलाने की कोशिश कर रहा है। पर नेपाल के मूढ़ माओवादी इन सबसे अनजान वही प्रयोग नेपालियों पर जबर्दस्ती करने के लिये उद्यत हैं। नेपाल की मुख्य जरूरत अर्थव्यवस्था का निर्माण करना है, पर माओवादियों को चांद चाहिए। इसीलिए वे सरकार के साथ बातचीत को ठुकराते हैं। उनका एकमात्र लक्ष्य सत्ता हासिल कर 'माओ ने कहा था.......' को हू-ब-हू लागू करना है। इसमें लोगों को होम किया जायेगा। पर उन्हें समझाने की बजाये हमारे बुद्धिजीवी उन्हें प्रोत्साहन देते हैं। स्वयं माओ की उत्तराधिकारी चीन सरकार नेपाली माओवादियों को समर्थन नहीं देती। लेकिन उन्हें भारतीय नक्सलवादियों तथा पाकिस्तान की आई.एस.आई. की मदद मिल रही है। आई.एस.आई. के भारतीय माओवादियों से संपर्क की खबरें चार साल से आ रही हैं (इंडियन एक्सप्रेस, 29 सितंबर 98)। लेकिन जब विध्वंस ही लक्ष्य हो तो विध्वंसकों की एकता में कोई अजूबा नहीं।

तमाम संकेत यही बताते हैं कि यदि नेपाल पर माओवादी कब्जा हो जाता है तो पोल पोत या स्वयं माओ के नक्शे कदम पर वे नेपाल को भी केवल तहस-नहस ही करेंगे। उनके बयान यही बताते हैं। उनकी हिंसा, लूट और हमले पहले से कमजोर नेपाली अर्थतंत्र को और चौपट कर चुके हैं। लगभग 13 करोड़ रुपये की संपत्ति वे नष्ट कर चुके। जबरन वसूली से व्यापार को नुकसान हो रहा है। पर्यटन से आय नेपाल का बड़ा स्रोत है, जो हिंसा से सूखता जा रहा है। उस पर निर्भर लोग भुखमरी की ओर बढ़ रहे हैं। मगर माओवादी विचारधारा इसे बुरा नहीं मानती, क्योंकि उनके नजरिये से इन सबसे क्रांति नजदीक आती है। भविष्य को वे अपने पक्ष में ले भी आते हैं।

अभी माओवादियों का लक्ष्य अपने-आप में हिंसा मात्र है। लेकिन यदि वे नेपाल की सत्ता हासिल कर लें तब क्या करेंगे? लेनिन, स्तालिन या माओ अपनी खामख्यालियों के आधार पर जबरन लागू की गई नीतियों का हिसाब देने के लिये आज बचे हुए नहीं हैं। यदि नेपाल भाग्यवान न हुआ तो कामरेड बाबूराम, गौरव, प्रचंड आदि भी वही कुछ करेंगे और देखेंगे कि उससे क्या निकलता है। अगली पीढ़ियां निश्चय ही उनकी मनमानी पर शोक मनायेंगी। लेकिन तब न ये माओवादी होंगे न उनके भारतीय पैरोकार। आखिर सार्त्र, नेरूदा अब कहां है।

भारतीय ध्रुववृत्त की महान् चाप

दो सौ साल पहले, यानी ठीक 10 अप्रैल, 1802 को हमारे देश में एक निर्भय और साहसी वैज्ञानिक-अभियान की शुरुआत हुई। 'भारतीय ध्रुववृत्त की महान चाप' नामक यह अभियान वास्तव में पृथ्वी की सतह को नापने के लिये उस समय तक किया गया सबसे लंबा प्रयास था। इसके पीछे विचार यह था कि पूरे भारतीय उपमहाद्वीप को नापकर पृथ्वी की गोलाई को सही तरह से निर्धारित किया जाये। शुरू में इस अभियान के नेता कर्नल विलियम लैम्बटन थे और सन् 1823 में उनकी मृत्यु के बाद सर जॉर्ज एवरेस्ट ने नेतृत्व सम्भाला था। इस अभियान के निर्भीक सर्वेक्षकों के दल को केप कोमोरिन से देहरादून तक 78 डिग्री पूर्वी रेखांश तक की 2400 किलोमीटर दूरी नापने में पचास वर्ष लगे थे। ऐसा कहा जा सकता है कि एक-एक इंच तक सही उतरने वाले इस सर्वेक्षण में, पूरे रास्ते में किसी भी समसामयिक युद्ध की तुलना में कहीं अधिक जानें गईं और पूर्व-कम्प्यूटर युग के किसी भी समीकरण की तुलना में कहीं अधिक जटिल समीकरण प्रस्तुत किये। इसीलिए इसे 'विज्ञान के इतिहास का एक अत्यन्त विलक्षण कार्य' कहकर सम्बोधित किया गया है। इस सर्वेक्षण दल को भारतीय उपमहाद्वीप की ध्रुववृत्तीय चाप को, दक्षिणी कोने से लेकर हिमालय की बर्फ तक ले जाने में पहाड़ियों, जंगल, बाढ़ और बुखार जैसी मुसीबतों का सामना करना पड़ा था। एक अत्यंत प्रिय एवं प्रतिभाशाली व्यक्तित्व वाले विलियम लैम्बटन ने इस विचार की परिकल्पना की थी और अनुशासनवादी जॉर्ज एवरेस्ट ने इसे पूरा किया था, बावजूद इसके कि कभी-कभी तो मलेरिया ने पूरे सर्वेक्षण दल को खत्म कर दिया, शेरों और बिच्छुओं ने भी लोगों को मौत के मुंह में पहुंचाया। इन शारीरिक कठिनाइयों के अलावा तकनीकी कठिनाइयां भी कुछ कम न थीं। उनके मापन यंत्र-थिओडोलाइट्स-का ही वजन आधा टन था और प्रायः सर्वेक्षण कार्य के लिये उसे स्थानान्तरित होने वाले नब्बे फीट ऊंचे प्लेटफार्मों पर या बर्फ से ढ़की पहाड़ों की चोटियों पर ले जाना पड़ता था। एक थिओडोलाइट को उठाने के लिये 12 आदमियों की जरूरत होती थी। इन भारी भरकम यंत्र का प्रयोग करते हुए देश की उत्तर दक्षिण और पूर्व-पश्चिम दिशाओं में भूमि को त्रिकोणों में बांटते हुए पूरे देश का सर्वेक्षण किया गया। ऐसे सर्वेक्षणों में त्रिकोणमिति का व्यापक प्रयोग होता है। इसी कारण यह विशाल परियोजना 'महान त्रिकोणमिति सर्वेक्षण' भी कहलायी।

सन् 1843 में एन्ड्रयू स्कॉट वाघ ने इस परियोजना के 'सर्वेयर जनरल' का पद सम्भाला। उन्होंने हिमालय की चोटियों के सर्वेक्षण पर विशेष ध्यान दिया। बादलों और धुंध के कारण वे चोटियां नीचे की जमीन से बहुत कम दिखाई देती हैं और 1847 तक केवल कुछ ही दिखाई देने वाली चोटियों में सफलता मिली थी। उन चोटियों का सर्वेक्षण करने के बाद भी उनके परिणाम, सर्वे-कार्यालयों के कम्प्यूटरों ने (निस्संदेह मशीनी नहीं, मानव-कम्प्यूटरों द्वारा) त्रिकोणमिति-गणना के द्वारा बड़े परिश्रम से विश्लेषित किये थे। सन् 1852 में वाघ के दल ने विश्व की सबसे ऊंची चोटी का मापन करने में सफलता पाई जो कि 29,002 फीट थी। (अब स्वीकृत ऊंचाई 29,035 फीट या 8850 मीटर है) 160 किलोमीटर की दूरी से इस चोटी का प्रेक्षण छह विभिन्न केन्द्रों से किया गया था और किसी भी स्थान से पर्यवेक्षक को यह सन्देह नहीं हुआ कि वह अपने टेलिस्कोप से पृथ्वी का सबसे ऊंचा स्थान देख रहा है। पहले सर्वेक्षण द्वारा इस चोटी को पीक-15 (चोटी 15) कहा गया था, किन्तु 1856 में वाघ ने इसका नाम, अपने पूर्व सर्वेयर जनरल सर जॉर्ज एवरेस्ट के नाम पर कर दिया। एवरेस्ट ही वह व्यक्ति थे जिन्होंने भारी भरकम थियोडोलाइटस मंगाये थे और पहली बार उनका उपयोग किया गया था। ये यंत्र आज देहरादून स्थित सर्वे ऑफ इंडिया के संग्रहालय में प्रदर्शित हैं। यह भी महत्वपूर्ण है कि प्रमुख कम्प्यूटर राधानाथ सिकदर ही वह व्यक्ति थे जिन्होंने पहली बार यह प्रतीत किया था कि 'पीक 15' विश्व की सबसे ऊंची चोटी है।

आज हम पृथ्वी की परिशुद्ध स्थिति का, अपनी कक्षा में घूम रहे और अपनी स्थिति का प्रसारण कर रहे 24 उपग्रहों के 'ग्लोबल पोज़िशनिंग सिस्टम' (जीपीएस) का प्रयोग करके, निर्धारण कर सकते हैं। आज हाथ में पकड़ा हुआ एक छोटा-सा इलेक्ट्रानिक यंत्र उनके संकेतों को ग्रहण करता है और उनकी एकदम परिशुद्ध स्थिति बताता है। इस गणना में त्रिकोणमिति का व्यापक प्रयोग होता है, किन्तु इसकी सारी गणना उपकरण के अन्दर लगे कम्प्यूटर द्वारा ही की जाती है। 'महान चाप' ने, पूरे भारत महाद्वीप का नक्शा तैयार करना संभव बनाया और इस तरह सड़कों, रेलवे और टेलीग्राफ का देश में विकास हुआ।' महान त्रिकोणमिति सर्वेक्षण' सभी प्रकार के स्थलाकृतिक सर्वेक्षणों की बुनियाद सिद्ध हुआ। इससे भी अधिक आज यह महत्वपूर्ण है कि पृथ्वी सतह की गोलाई संबंधी नयी मान्यतायें प्रस्तुत करके, ध्रुववृत्त चाप ने हमारे ग्रह के सही आकार के बारे में हमारे ज्ञान को बढ़ाया है।

—विनय बी. काम्बले

कोलकाता में आयोजित National Convention on Education का उद्घाटन करते श्री के.आर. मलकानी, 10-3-2002

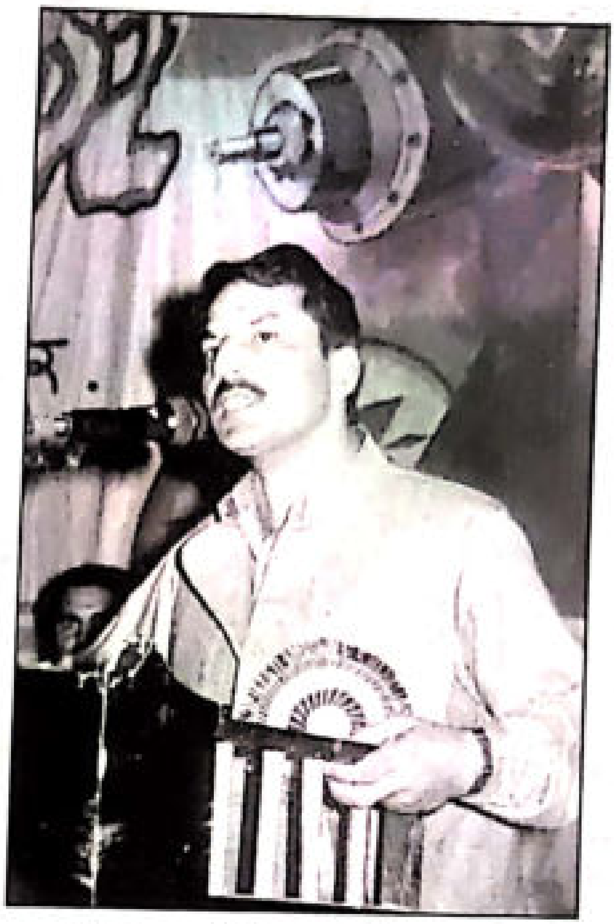

डॉ. कैलाश शर्मा, डिपेक्स-2002 के उद्घाटन सत्र में सम्बोधित करते हुए

डिपेक्स में विजयी छात्र सम्मान प्राप्त करते हुए

डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर

(14 अप्रैल, 1891 - 6 दिसम्बर, 1956)

हिंसाचार के सामने झुककर प्राप्त शांति कभी शांति नहीं हो सकती। वह आत्मघाती ही नहीं, बल्कि गौरवपूर्ण मानवीय जीवन के लिये आवश्यक सभी उदात्त तत्वों की बर्बरता और पाशविक शक्तियों के आगे बलि चढ़ाना है।

(गांधी और गांधीवाद)